

ॐ ६१. १५

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

प्रथम अंक ॥ १ ॥

॥ श्रीवेदांतपदावलि ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

सर्व मुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्री मुंबईमें निर्णयसागरभेममें छपा ॥

॥ संवत् १९४२-सन् १८८६ ॥

(प्रकटकर्तासे सर्वहक स्वधुवेदसे किये जाते हैं ॥

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ।
प्रकट करों जिस करि सब सज्जन पावहु मोद १

श्रीवेदांतविनोदमें लगुमंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिन मंथोंके नाम इस मंथके प्रत्येक अंकके अंतमें दृष्ट पड़ेगे । परमदयालु ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकी सहायतासे वेदांतविनोदके अंक प्रकट किये जाते हैं ॥

उक्त महाराजधीरुत श्रीविचारचंद्रोदय छपा है । तिस मंथकी अब तृतीयावृत्ति छपी है ॥ यह मंथ प्रथोत्तररूप होनेके कंठ करनेमें सुगम नहीं है ॥ बहुत सरसियों सुप्रभुजनोंकी प्रार्थनासे महाराजधीने यह वेदांतपदावलि रची है । जिसमें श्रीविचारचंद्रोदयकी प्रत्येककलाका कवितामेंही अर्थ समावेश किया है ॥

नवीन सुप्रभुनकू श्रीविचारचंद्रोदय । आधुनिक सभ
में क्षुधावानकू भोजन जैसा भया है । ताते उक्तमंथ
यासभे यह श्रीवेदांतपदावलि तिनोकू नृत्तिकी देनेवा
(१) ॥

॥ ॐ श्री गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांत विनोद ॥

प्रथम अंक ॥ १ ॥

अथ श्रीविचारचंद्रोदयकी षोड-
शकलाके अनुसार वेदांत
पदावलिः प्रारभ्यते ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥ १ ॥

॥ मर्महर छंद ॥

पुरुषइच्छा विषय पुरुषार्थ जोई सोई ।

इ क्षणाश मुलप्रतिरूप मोक्ष मानहु ॥

हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।

तमिँ अपरोक्ष दृढ भदृढ दो गानहु ॥

॥ १ ॥ कोईवी रागके ध्रुवपदमें गाया आवै हे ॥

मोक्षको साक्षात् हेतु दृढअपरोक्ष ज्ञान ।

हेतु ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥

तीन वस्तुरूप जडचेतन दो जड मिथ्या ।

माया ब्रह्मचित् "सो मैं" पीतांबर स्यानहु ॥ १ ॥

॥ प्रपंचारोपापवाद ॥ २ ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्प्रपंच वस्तु-

ब्रह्म जानिके अवस्तु मायादिक मानिये ॥

ब्रह्म माया संबंध रु जीवईश भेद तिन ।

पट् ये अनादि तामें ब्रह्मानंत मानिये ॥

पस्तुमें अवस्तु कर कथन आरोप बाधि ।

॥ २ ॥ अन्वयः— ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु विचार हे ॥

॥ ३ ॥ ऐसैं निश्चय करो ॥

॥ ४ ॥ अन्वयः— अवस्तु बाधि वस्तुकथन अपवाद मानिये ॥

अवस्तु वस्तु कथन अपवाद गानिये ॥
 गुरुके प्रसाद यह युक्ति जानि पीतांबर ।
 तैज तमकारज आरज निज जानिये ॥ २ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥

द्रष्टा तीन देहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये ।
 तीन देह दृश्य अरु अनात्मा मानियो ॥
 पंचीकृत पंचभूतके पचीसतत्वनको ।
 स्थूल देह एह भोग आयतन गानियो ॥
 अपचीकृत भूतके सप्तदशतत्वनको ।
 सूक्ष्मदेह सीइ भोग साधन प्रमानियो ॥
 अज्ञान कारणदेह घटवत दृश्य एह ।
 पीतांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य मानियो ॥३॥

॥ ५ ॥ अन्वय - हे आरज (विप्रेकी) तमका
 रज तज । निज (स्वरूप) जानिये ॥

॥ मैं पंचकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥

पंच कोशातीत मैं हूँ अन्न प्राण मनोमय ।

विज्ञान आनंदमय पंचकोश नातमा ॥

स्थूलवेह अन्नमय कोश लिंगदेह प्राण ।

मम रु विज्ञान तीन कोश कहें मातमा ॥

कारण आनंदमय-कोश ये कारण जड ।

विकारी विनाशी व्यभिचारीहीं अनातमा ॥

अज चित अविकारी नित्य व्यभिचारहीन ।

पीतांबर अनुभव करता मैं आतमा ॥ ४ ॥

॥ ६ ॥ आत्मा नहीं । अर्थ यह जो अमात्मा है ॥

॥ ७ ॥ महात्मा लिंगदेह [फू] प्राण मन अरु
विज्ञान तीनकोशरूप कहै हैं ॥

॥ ८ ॥ पंचकोश ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥ ९ ॥

अवस्था तीनको साक्षी आत्मा अन्वय याको ।

व्यभिचारी अवस्थाको व्यतिरेक पाईयो ॥

त्रिपुटी चतुरदश करि व्यवहार जहा ।

स्पष्ट सो जाग्रत जूठ ताकू दृश्य ध्याईयो ॥

देखे सुने चस्तुनके सस्कारसँ सृष्टि जहां ।

अस्पष्ट प्रतीति स्वप्न मृषा लोक गाईयो ॥

सकल करण लय होय जेहा सृष्टि सो ।

॥ ९ ॥ या (आत्मा) को अन्वय (पुण्यमालाँमें
सूत्रकी न्वाई तीनअवस्थाँमें अनुस्यूतपना) है । यह
अर्थ है ॥

॥ १० ॥ पुण्यनकी न्वाई तीनअवस्थाका परस्पर
औ अधिष्ठानतँ भेद ॥

॥ ११ ॥ अन्वयः—जहा सकल करण लय होय ।
सो सृष्टि है ॥

पीतांबर तुरीयही प्रत्येक प्रेत्याईयो ॥ ५ ॥

॥ प्रपंच मिथ्या वर्णन ॥ ६ ॥

॥ ललित छंद ॥

सकल दृश्य सोऽज्यास छोडना ।

जग आधारमें चित्त जोडना ॥

त्रय देशाहि जो जाप्रदादि हैं ।

सब प्रपच सो भिन्न नाहिं हैं ॥ ६ ॥

रजतआदि हैं सीपिमें यथा ।

नय दशा सु हैं ब्रह्ममें तथा ॥

रक्त आदिवत् दृश्य ये मृषा ।

॥ १२ ॥ अतरात्मा ॥

॥ १३ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ १४ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतीसवै
अध्यायगत गोपिका गीतकी -याई है ॥

॥ १५ ॥ तीनअवस्था ॥

शुगतिकादिवत् ब्रह्म अमृषा ॥ ७ ॥
 व्यभिचरं मिथो र्जत आदि ज्यो ।
 इनहिकी पिथो वैभ्रवृती जु त्यो ॥
 शुगति सूत्रवत् अनुग एक जो ।
 अर्धवृतीयुतो ब्रह्म आप सो ॥ ८ ॥
 शुगतिकामर्ही तीने अंस ज्युं ।
 अजड ब्रह्मर्मे तीन अंस त्मं ॥

॥ १६ ॥ सत्य है ॥

॥ १७ ॥ परस्पर ॥

॥ १८ ॥ इहां आदि शब्दकरि भोदल (अव-
 रत्न) औ कायजका महण है ॥

॥ १९ ॥ भेद (अन्योन्याभाव) ॥

॥ २० ॥ पुष्पमालाभि सूत्रकी न्याई ॥

॥ २१ ॥ अनुस्यूतताकरि युक्त ॥

॥ २२ ॥ सायान्य । विशेष । कल्पितविशेष ।
 ने तीनअंस हैं ॥

उभयै अंसकूं सत्य जानिले ।

त्रैतिय त्यागदे मोक्ष तो मिले ॥ ९ ॥

भिदें भ्रमादि जो पंचधा भवं ।

त्रिविधतापता तप्त सो देवं ॥

परशु पंचधा युक्तियो करी ।

करि विचार तूं छेद ना डरी ॥ १० ॥

॥ २३ ॥ सामान्य भी विशेष । इन दो अंशकूं ॥

॥ २४ ॥ कल्पित अंशकूं ॥

॥ २५ ॥ भेदभ्रातिसैं आदिलेके ॥ दहा आदि शब्दकरि कर्ताभोक्तापनेकी भ्राति । संगभ्राति । विकारभ्राति । ब्रह्मसैं भिन्न जगतके सत्यताकी भ्राति । इन च्यारीभ्रातिनका ग्रहण है ॥

॥ २६ ॥ पांचमकारका संसार है ॥

॥ २७ ॥ वन है ॥

॥ २८ ॥ अन्वयः—पंचधा (पांचमकारकी) युक्तियो (दहातरूप) परशु (कुठार) करी ॥

नहि जु जाहिमें तीन कालमें ।

तहँहि भान व्हे मध्यकालमें ॥

शुगति रौप्यवत् ध्यास सो भ्रम ।

अर्थज्ञान दो भांतिका क्रम ॥ ११ ॥

द्विविधं वेम है ज्ञान अर्थको ।

अर्थभ्राति वा पड्डिधा वको ॥

सकल ध्यास जे जगतमें ^उदैसे ।

॥ २९ ॥ अन्वयः—सो भ्रम (अध्यास) अरथ (अर्थाध्यास) औ ज्ञान (ज्ञानाध्यास) [या] क्रम (क्रमसँ) दो भांतिका है ॥

॥ ३० ॥ अन्वयः—ज्ञान (ज्ञानाध्यास औ) अर्थ (अर्थाध्यास)को वेम (अध्यास) [मल्येक] द्विविध है ॥

॥ ३१ ॥ वा अरथ भ्राति (अर्थाध्यास) पड्डिधा पट्टमकारको) वको (कही) ॥

॥ ३२ ॥ दिखाये

सबसु याहिके बीचमें धैसे ॥ १२ ॥

निज चिदात्मरू ब्रह्म जानिके ।

सकल वेमको भूँल भानिके ॥

परम मोदरू आप बूजि ले ।

इहहि मुक्ति पीतांबरो मिले ॥ १३ ॥

॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥

॥ इंद्रविर्जय छंद ॥

आत्म विशेषण है जु दुर्भाति ।

विधेय निषेध्य कहों निरधारे ॥

वे^{३७}सब जानि भले गुरु शास्त्र सु ।

॥ ३३ ॥ मवेशकू पाये हैं ॥

॥ ३४ ॥ अज्ञान ॥

॥ ३५ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकू आत्मा जानीले ॥

॥ ३६ ॥ ठुमरी औ लावनीमें गाया जावे है ॥

॥ ३७ ॥ वे विशेषण ॥

सो अपनो निजरूप निहारे ॥
 सच्चिदनद रु ब्रह्म स्वयंपर- ।
 काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
 द्रष्टु अरु उपद्रष्टु रु एकहि ।
 आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
 अंतर्विहीन अखंड असंग रु ।
 अद्वय जैन्मविना अविकारे ॥
 चौरि अकारविना अरु व्यक्त ।
 न मौननेको विषयो लु निकारे ॥
 कर्म करीहि बडे न घटे इत ।
 हेतुहि अव्यय वेद पुकारे ॥

॥ ३८ ॥ अनत ॥

॥ ३९ ॥ अजमा ॥

॥ ४० ॥ निराकार ॥

॥ ४१ ॥ अमनेय ॥

अक्षर नाशविना कहिये इस ।

आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥ सत्चित्तुआनंदका विशेषवर्णन ॥८॥

सच्चिदनंद सरूप हि मैं यह ।

सदुरुके मुखपे पहिचान्यो ॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति जु आदिक ।

तीनहुं कालहि मैं परमान्यो ॥

जाग्रत आदि लयावधि तीनहुं ।

कालहि हों इसते सत मान्यो ॥

तीनहुं कालविषै सब जानहुं ।

याहित मैं चिदरूपहि जान्यो ॥ १६ ॥

मैं प्रिय हुं धन पुत्र रु पुँदेल ।

आदिकते प्रयकाल अंगान्यो ॥

॥ ४२ ॥ स्थूल शरीर ॥

॥ ४३ ॥ तृप्त ॥

आत्म अर्थ सबे प्रिय आत्म ।
 आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥
 या हित में सबतें प्रियतम्मरु
 हों परमानंद दुःखहि भान्यो ॥
 देह देशादि अतीत सु आत्म ।
 पूरण ब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

॥ अवाच्यसिद्धांत वर्णन ॥ १ ॥

ब्रह्म अहै मन वानि अगोचर ।
 शास्त्र रु संत कहें अरु ध्यावैं ।
 वेद वदें लछनादिक रीति रु ।
 वृत्ति विआप्ति जनो मन छावैं ॥
 हें जु सदादि विषेय विशेषण ।
 वे असदादिक भिन्न कहावैं ॥

सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि^१ जु ।

अंस तनी परमार्थ लखावै ॥ १८ ॥

हैं जु अनंत अखंड असंग रु ।

अद्वय आदि निषेध्य रहावै ॥

वे परपंच निषेध करी अव-

शेषित वस्तु गिरा विन गावै ॥

यूं परमात्म आत्म देव ही ।

वेद रु शास्त्र सवे सुरटावै ॥

पंडितें त्यागि अभास पीतांबर ।

१ ॥ १५ ॥ अपेक्षिक सत्य । वृत्तिज्ञान औ विषयानंद आदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ १६ ॥ वास्तवरूप जो निरपेक्षसत्य । चेतन-रूपज्ञान औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणार्थ बोधन करे हैं ॥

॥ १७ ॥ पंडित पीतांबर कहै है कि:- आभास

वृत्ति अहं अपरोक्षहि षावै ॥ १९ ॥

॥ सामान्यविशेष चैतन्य वर्णन १०

चेतन है जु समान विशेष सु ।
 दो विध सत्य सुजान समाने ॥
 अंति सरूप विशेष जु कल्पित ।
 संसृति आश्रय सो तिहि भावै ॥
 ज्यों रविको प्रतिबिंब जलादिक ।
 सो रविरूप विशेष पिछानै ।
 त्यों मतिमें प्रतिबिंब परातम ।
 सो कल्पोन विशेष हि जानै ॥ २० ॥
 आवत जावत लोक मलोक हि ।

(फलव्याप्तिकू) व्यागिके अहंवृत्ति (वृत्ति व्या-
 सिकरि) अपरोक्ष भावै । यह अर्थ है ॥

॥ ४८ ॥ परमात्माका प्रतिबिंब ॥

भोगत भोग जु कर्म निपाने ॥
 सो सब चित्त अभास करै अरु ।
 शुद्ध समान मही नहि आने ।
 अस्ति रु भाति प्रिय सब पूरन ।
 ब्रह्म समान सु चेतन माने ॥
 नाम रु रूप तजी सत चेतन ।
 मोद पीतांबर आप पिठाने ॥ २१ ॥

॥ तत्त्वंपदार्थैक्य निरूपण ॥ ११ ॥

वाच्य रु लक्ष्य लखी तत त्वंपद ।
 लक्ष्य दुहुकर एक ददावै ॥
 भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रु ।

॥ ४९ ॥ जो कर्मरचित भोग है । [ताकू] भोगता है ॥

॥ ५० ॥ चेतनका प्रतिबिंब ॥

धर्म समेत उपाधि उदावै ॥
 जन्म धिती लय कारक मौयिक ।
 जाननहार सबी जग भावै ॥
 ईश्वर वाच्य सुहै ततपादहि ।
 ब्रह्म सुलक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥
 संसृति मानत आपहिमें पर-
 तंत्र अविद्यक अल्प जनवै ।
 त्वंपद वाच्य सु जीव विवेचित ।
 लक्ष्य सुसाक्षि उपाधि द्वावै ॥
 वाच्य दुअर्थ हि भेद वि है पुनि ।
 लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
 ब्रह्म अह इस भांति जु जानत ।
 सोई पीतांबर ब्रह्महि पावै ॥ २३ ॥

॥ ५१ ॥ माया उपाधिवान् ॥

॥ ५२ ॥ अविद्या उपाधिवान् ॥

॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकार ॥ १२ ॥

॥ तोटकैछंद ॥

जिन आत्मरूप मॅयो जु भले ।

तिस त्रैविध कर्म मिटै सकले ॥

तैमै आवृत्ति आवृत्त सचित ले ।

निज बोध सु पावक सर्व जले ॥ २४ ॥

जड चेतन गांठ विभेद बले ।

दृढराम द्रवेष कषाय गले ॥

जलमै जिम लिप्त न कर्जदले ।

परसे न अगामि जु कर्म मले ॥ २५ ॥

॥ ५३ ॥ हुमरीमै गाथा जावै है ॥

॥ ५४ ॥ देख्यो ॥

॥ ५५ ॥ अज्ञानकी आवरणशक्तिके आवृत्त स
चितकर्मोंकु लेके ॥

॥ ५६ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरंभक कर्म फले ।
 सुख दुःखहि भोगत होत प्रले ॥
 इस भाति जु होवत जन्म विले ।
 पिखैरूप पीतांबर स्व विमले ॥ २६ ॥

॥ सप्तज्ञानभूमिका वर्णन ॥ १३ ॥

निज बोधके भूमि सु सप्त अहै ।
 इस भाति वैसिष्ट मुनीश कहै ॥
 शुभ साधन सपति आदि लहै ।
 भवणादि विचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥
 निदिध्यासन तीसर भूमि गहै ।
 अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥
 हमता ममता बिन पचम है ।
 छठवी सच वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ ५७ ॥ देखिके ॥

॥ ५८ ॥ योगवाखिष्ट ग्रथविधै ॥

सतमी तुरिया जु वरिष्ठित है ।

सब वृत्ति विलीन चिदात्म रहे ॥

इवै गाढ सुषुप्ति न जागत है ।

परमानंद मत पीतांबर है ॥ २९ ॥

॥ जीवन्मुक्ति विदेहमुक्ति वर्णन ॥ १४ ॥

जब जानत है निज रूपहिक्कं ।

तब जीवन्मुक्ति समीपहि कूं ॥

भ्रमबंध निवृत्ति सदेहं हिक्कं ।

सुख संपति होवत गेहहिक्कं ॥ ३० ॥

विदवान तजे इस देहहिक्कं ।

॥ ५९ ॥ गाढसुषुप्ति इव (वतु) ॥

॥ ६० ॥ तब शरीरसाहित पुरुषकूं भ्रमरूप बंधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपहीकूं (तत्काल होवै है) यह अर्थ है ॥

तव पावत मुक्ति विदेहहिकूं ॥

तम लेश भजे सद नाशहिकूं ।

तज देत प्रपंच अमासहिकूं ॥ ३१ ॥

सरिता इव सागर देशहिकूं ।

चिनमात्र मिलाय ^{६२} विशेषहिकूं ॥

चिद होय भजे अवशेषहिकूं ।

नहि जन्म पीतांबर शेषहिकूं ॥ ३२ ॥

॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥ १५ ॥

॥ ललित छंद ॥ (गोपिकागीतवत्)

जन तु जानिले ^{६३} ज्ञेय अर्थकूं ।

॥ ६१ ॥ सागरदेशहिकू सरिता इव (नदीकी न्याई) ॥

॥ ६२ ॥ स्थूलसूक्ष्म प्रपंचसहित चिदाभासरूप निक्षेपकूं ॥

॥ ६३ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूं ॥

सकल छेद सं दे अनर्थकं ॥

मुगति कौन है हेतु ताहिको ।

जनक बीचको कौन वाहिको ॥ ३३ ॥

विषय बोधको कौन जानिले ।

प्रतक ईशको तत्व मानिले ॥

अहं अर्थकं सूत्र खोजिले ।

तत पदार्थकं शुद्ध सोजिले ॥ ३४ ॥

परम आत्मा एक मानि ले ।

तहँ सदादि ऐश्वर्य आनि ले ॥

सत चिदात्म सो सर्वदाँ अहै ।

॥६४॥ वाहिको (मोक्षके हेतु ज्ञानको) बीचको
जनक (अवांतरसाधन) कौन है ॥

॥ ६५ ॥ अहं (त्वं) पदके अर्थकं ॥

॥ ६६ ॥ ब्रह्म ॥

॥ ६७ ॥ सच्चिदानंद स्वरूप सो (ब्रह्मआत्माकी
एकता) सर्वदा (तीनोंकालमें) है ॥

इम पीतांबरो ज्ञानरूँ महै ॥ ३५ ॥

॥ षोडशकला वर्णन ॥ १६ ॥

निष्कलं निजं वेदही वदे ।

षट् दशं कला ब्रह्ममै न दे ॥

निरवयेव जो निष्कलंक सो ।

इकरसं सदा अंगता न सो ॥ ३६ ॥

हिरण्यगर्भ औ श्रद्धया नमो ।

पवन तेज कां भूमि इंद्रियो ॥

मन अनाज औ ईशिकि सत्तपो ।

करमलोक नामार्मनूजपो ॥ ३७ ॥

षट् दशं कला एहि जानिले ।

जड उपाधिको धर्म मानिले ॥

॥ ६८ ॥ बल ॥

॥ ६९ ॥ मंत्रका अप ॥

अनुगताश्रयो पुष्पसूत्रवत् ।

निज चिदात्म पीतांबरो हि सत् ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

पांचकलाहि कवित्तमं । पांच सवैया मांहि ॥

ललित छंदमें तीन हैं तोटकमें त्रय आंहि ॥ १ ॥

पांचकवित दशसवैया । चौदा ललित पिछान ॥

नवतोटक एकत्र करि । अठतिस छंद प्रमान ॥२॥

विचारचंद्रोदयकला । षोडस सार निचोड ॥

पीतांबरनै गानियो । वर षोडश पद जोड ॥३॥

जो जन यह षोडशपदी । समुज गाय मन लाय ॥

सो निजबोध सुपायके । पुनर्जन्म नहि आय ॥४॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्री विचारचंद्रोदयं शुद्धां धियं समाप्य ॥ -

विचार्येति परानंदं तच्च ज्ञानमवाप्य ॥ ५ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत

॥ हिंदुस्थानी भाषाके पद ॥

राग समयानुसार ॥ १ ॥

रामरूप हैं मेरे सहुरु ।

रामरूप हैं मेरे रे ॥

रमत चतुर्दश लोक लीलाकृत ।

दमतं दोष बहुतेरे रे ॥ टेक ॥

निजअनुभव जिन मोहि वताया ।

श्रुति स्मृति शब्दहि टेरेरे ॥

कर्णरंभ मग चले अंत तव ।

काम क्रोध लिये घेरे रे ॥ १ ॥

सत् चित् आनंद रूप स्वयं निज ।

पूरन ब्रह्म ढेरे रे ॥

सुंहीं ऐ अम रह्यो वृषारि ।

तुंहीं लयो तिहि घेरे रे ॥ २ ॥

संशय भ्रमादि मिटे मनके सद्य ।

भये मुशात सुरोरे रे ॥

गुरुनापू पद पन्न षोताम्बर ।

लये गये भय फेरे रे ॥ ३ ॥

राग आशा ॥ २ ॥

मो कैसें कहिये ज्ञानी ।

जाकी वृत्ति विवेक विहानी ॥ टेक ॥

हरि गुरु भक्ति शमादिक साधन ।

धारि न बुद्धि विषय रस सानी ।

जन्म अनत भोगि न अगानी ॥ १ ॥

मोक्षरूप साधन नाहिं जानी ।

ज्ञानरूप साधन न पिछानी ।

ज्ञेयवस्तु मनमें नहीं आनी ॥ २ ॥

देह अवस्था कोश जगततै ।

चेतनको नहिं भिन्न लखानी ।

निज तत्त्व असग न गानी ॥ ३ ॥

तत्त्वं पदको धाच्य लक्ष्य लखि ।

लक्ष्य दुहुनको एक न मानी ।

अज्ञान जगत नहिं मानी ॥ ४ ॥

पीतांबर कहे संशय भ्रम तजि ।

वृत्ति न ब्रह्मरूप ठहरानी ।

जहा नहिं पहुचे मन वानी ॥ ५ ॥

राग आशा ॥ ३ ॥

सो सज्जन कहिये ज्ञानी ।

जाकी खुलि अनुभवकी खानी ।

सो सज्जन कहिये ज्ञानी ॥ टेक ॥

साधन चारिकी धारि निसानी ।

विधिवत शरण गह्यो गुरु ज्ञानी ।

ब्रह्मात्मको शोधन ध्यानी ॥ १ ॥

महावाक्य अर्थ जिय आनी ।

श्रवन मनन निदिध्यास करानी ।

मान मेय संशय भ्रम हानी ॥ २ ॥

जीव रु ईश भाव विसरानी ।

बंध मोक्षकी बुद्धि बिलानी ।

अहंब्रह्म अस निश्चय ठानी ॥ ३ ॥

द्वैतबुद्धि जाकी जो नसानी ।

ज्यो, तरंग परपोटा पानी ।

सहज समाधि स्थिती ठहरानी ॥ ४ ॥

सद्गुरु बापू पदरज परसी ।

पीतांबर जु मयो ब्रह्मज्ञानी ।

गुरु रास्त्र जगत ब्रह्म जानी ॥ ५ ॥

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी. वेदांतपुस्तकालय—कराची.

बहुतकरिके सरकृत तथा भाषाके छपे हुये सर्व वेदांत-
विषयक मय हमारे वहासे मिल सकते हैं ॥ कोई भी मय
लेनेकी इच्छावालेकू प्रथमी कीमत तथा डाक महसूल ज-
नाया आविगा । उत्तरके लिपे डवलकाई भेजना ॥

नीचु लिखे मयनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा
मान वेल्डुपेएवलका डाककमोशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति- रबावलि तथा बड़ी अकारादि अनुक्रमणिकास- हित तृतीयावृत्ति	३।
„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी	४।
श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिज तृतीयावृत्ति	२।				
„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी.	३
श्रीसटीका अष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित.	२				
„ उक्तग्रंथ उत्तम पूडे औ कागदका.	२।।
श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति	०।।
श्रीपञ्चदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें	१५				
घोड़ेही मय रहे हैं । (बहुत करिके फेरछपनेकी नहीं)					
श्रीपञ्चदशीका प्रथम प्रकरण....	०।।

ॐ

श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

श्रीवेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

ब्रह्मनिष्ठपण्डितश्रीपीतांबरजीकी

Dr. V. आज्ञाअनुसार

श्रीशरीफ सालेमहंमदनै

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा.

॥ संवत् १९४२-सन् १८८६ ॥

(प्रकटकर्तानि सर्वहक स्वामीन रखे हे)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ।
प्रकट करो जिस करि सर्व सज्जन पावहु मोद ?

श्रीवेदांतविनोदमें लघुमथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिन मथोंके नाम इस मथके प्रत्येक अक्षके अंतमें दृष्ट पढ़ने ॥ परमदयालु ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी - महाराजकी सहायतासे वेदांतविनोदके अक प्रकट किये जाते हैं ॥

वेदांतपदार्थसंज्ञा नामक प्राचीन मथ है । तिसपर “पदार्थमञ्जूषा” नामक व्याख्या महात्मा मूलचंद्र ज्ञानीने करी है सो “पदार्थमञ्जूषा” ब्रह्मनिष्ठ पंडित श्रीपीतांबरजीने शोधन करि प्रकट किया है ॥ यह लघुमथ श्रीविचारचंद्रोदयमें षोडशकलाहस्यसे नो प्रकट किया है ॥

‘ अजिह्वत्वादि ६।१४०’ आदिक अकारादि अनुक्रमसे रखे हैं । तहा ६ का अक पष्ठपदार्थनका सूचक है । औ १४० का अक । पदार्थसंख्याकके अनुक्रमाक जो श्रीपदार्थमञ्जूषामें रखे हैं । तिनका सूचक है ॥ जिन पुरुषनके पास पदार्थमञ्जूषा है तिनोके वास्ते यह सुखकर अनुक्रमणिका है । औ सुमुशुनकू पदार्थस्मृतिमें सहायक है ॥

शरीफ मालेमहंमद.

ॐ

पदार्थमञ्जूषागत

भंगलाचरणं

ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीकृतम्.

॥ नाराचट्टम् ॥

कलं कलंक कज्जलं तमः प्रलापि सज्जलं ।

गतातिचंचलाचलं सुशांतिशीलमुज्ज्वलम् ॥

सदा सुखादिकंदलं वितापपापशामकं ।

नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनाभकम् ॥ १ ॥

समानदानदायकं भवाववाक्यसायकं ।

सुशुद्ध धीविधायकं सुनीद्र मौलिनायकम् ॥

स्वसंगीतगायकं व्यक त्रिलोकामकं ।

नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनाभकम् ॥ २ ॥

शमस्रमादिलक्षणं मतिक्षणं स्वशिक्षणं ।

मुमुक्षुरक्षणे क्षमं क्षमेषु वै विलक्षणम् ॥
 सुलक्ष्य लक्ष्य संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
 कलेशलेशवेशशून्यदेशके भवेशकं ।
 गताविशेषशेषकं ह्यशेषवेषदेशकम् ॥
 परेशकं भवेशकं समस्तभूपभामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
 सकालकालिजालभालभेदिभानभङ्गकं ।
 प्रभिन्नखिन्ननुन्नभाविजन्ममत्त मल्लकम् ॥
 सभेदखेदलेदधेदवाक्ययूथयामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ५ ॥
 भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
 सुशुद्धसत्त्वबुद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
 स्वलोकशोकशीपकं वितोषदोषवामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ६ ॥

सबंधुजन्यसिंधुपारकारिकर्णधारकं ।
 सलोभशोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥
 स्वबालकालवारकं समाप्तसर्वकामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ७ ॥
 स्वलक्ष्यदक्षचक्षुषं स्वरूपसौख्यसंजुषं ।
 कृतार्थचेतनायुषं गतार्थगामितस्थुपम् ॥
 विभोग्यजातदुर्विषं सुषं गुणालिदामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ८ ॥
 भवाटवीविहारकारि जीवपांथपारदं ।
 सुयुक्तिमुक्तिहारसारदं सुबुद्धिशारदम् ॥
 सपीतपादकांवरो ब्रवीतितं स्वरामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ९ ॥

श्रीमन्मंगलमूर्तिपूर्तिसुयशः-

स्वानंदवान्पुल्लसत् ।

सौभाग्यैकसरित्पति प्रतिहत-

शोडशततापत्रयम् ॥

संसारसृष्टिलक्षणममनसा-

मुद्धारकं कागतं ।

प्रत्यक्तत्त्वसुचित्स्वरूपसुगुरुं ।

रामं भजेऽह मुदा ॥ १ ॥



॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

द्वितीय अंक ॥ २ ॥

॥ अथ श्री वेदांतपदार्थसंज्ञा ॥

अजिब्रह्वादि ६।१४०

अजिब्रह्मत्व

नपुंसकत्व

पंगुत्व

अंधत्व

बधिरत्व

मुग्धत्व

अतलादि ७।१४९

अतल

वितल

सुतल

तलातल

रसातल

महातल

पाताल

अध्यात्मताप २।१७

आधि (मानसताप)

व्याधि (शारीरताप)

अध्यात्मादि ३।६९

इंद्रिय (अध्यात्म)

देवता (अधिदैव)

विषय (अधिभूत)

अध्यास २।२३

अर्थाध्यास

ज्ञानाध्यास

अनात्माके धर्म

१२ । १६९

अभित्य

विनाशी

अशुद्ध

नाना

क्षेत्र

आश्रित-

विकारी

परप्रकाश

हेतुमान

व्याप्य

संगी

आवृत

अनादिपदार्थ ६।१४५

जीव.

ईश

शुद्धचेतन

अविद्या

चेतनअविद्यासंबंध

तिनका संबंध

अनुबंध ४ । ८५

अधिकारी

विषय

प्रयोजन

संबंध

अन्तःकरण ४।८६

मन । चित्त

बुद्धि। अहंकार

अन्तःकरणदोष ३।७१

मल । आवरण

विक्षेप
 अभाव ५ । १२६
 प्रागभाव
 प्रध्वंसाभाव
 अन्योऽन्याभाव
 अत्यंताभाव
 सामयिकाभाव
 अरिवर्ग ६ । १२८
 काम । मोह
 क्रोध । मद
 लोभ । मत्सर
 अर्थवाद ३ । ६८
 अनुवाद
 गुणवाद
 भूतार्थवाद
 अवधि ३ । ५३
 बोधकी

वैराग्यकी
 उपरामकी
 अवस्था ३ । २९
 जाग्रत । सुषुप्ति
 स्वप्न
 अवस्था ७ । १४६
 अज्ञान
 आवरण
 विक्षेप
 परोक्षज्ञान
 अपरोक्षज्ञान
 शोकनाश
 तृप्ति
 अवस्था ६ । १३३
 शिशु । किशोर
 कौमार । यौवन
 पौगंड । जरा

असंभावना २ । ८

प्रमाणगत

प्रमेयगत

अहंकार २ । १४

शुद्ध (सामान्य)

अशुद्ध (विशेष)

अज्ञान २ । २

समष्टि । व्यष्टि

अज्ञानकी शक्ति २ । ५

आवरणहेतु

विक्षेपहेतु

अज्ञानके भेद ५ । १२३

मायाअविद्यारूप

ज्ञानक्रियाशक्तिरूप

विक्षेपआवरणरूप

समष्टिव्यष्टिरूप ।

कारणरूप

आत्मा ३ । ६६

ज्ञानात्मा । शांतात्मा

महानात्मा

आत्माके धर्म १२ । १६९

निस । अविक्रय

अव्यय । स्वप्रकाश

शुद्ध । हेतु

एक । व्यापक ।

क्षेत्रज्ञ । असंगी

आश्रय । अनावृत

आत्माके भेद ३ । ७२

मिथ्यात्मा । मुख्यात्मा

गौणात्मा

आनंद ३ । ६०

ब्रह्मानंद

विषयानंद

वासनानंद

आन्ध्यादि ३ । ५५	ईश्वरके ज्ञान ६ । १४४
आन्ध्य । माद्य । पटुत्व	उत्पत्ति । आगति
आर्तादि भक्त ४ । ९७	मलय । विद्या
आर्त । अर्थार्थी	गाते । अविद्या
जितासु । ज्ञानी	उत्पत्त्यादिक्रिया ४ ।
आश्रम ४ । ८३	९८
ब्रह्मचर्य	उत्पत्ति । विकार
गृहस्थ	प्राप्ति । सस्कार
वानप्रस्थ	उद्देशादि ३ । ७५
सन्यास	उद्देश । परीक्षा
ईश्वरके भग ६ । १४३	लक्षण
समग्रऐश्वर्य	उपवायु ५ । १०८
समग्रधर्म	नाग । देवदत्त
समग्रयज्ञ	कूर्म । धनजय
समग्रश्री	कुकट
समग्रज्ञान	उपासना २ । २३
समग्रवैराग्य	सगुण । निर्गुण

उर्मि ६ । १३१

जन्म । तृषा

मरण । हर्ष

क्षुधा । शोक

एषणा ३ । ५५

पुत्रैषणा

वित्तैषणा

लोकैषणा

करण ३ । ३०

मन । वाणी । काय

कर्तव्यादि ३ । ७३

कर्तव्य । प्राप्तव्य

ज्ञातव्य

कर्म ३ । ३१ ।

पुण्य । पाप । मिश्र

कर्म ३ । ६१

सचित । आगामी

प्रारब्ध

कर्म ५ । १०९

नित्य । प्रायश्चित्त

नैमित्तिक । निषिद्ध

काम्य

कर्म ६ । १३७

ज्ञान । अर्चन

जप । आतिथ्य

होम । वैश्वदेव

कर्मइंद्रिय ५ । १०५

वाक् । उपस्थ

पाणि । गुद

पाद

कर्मादि ३ । ७४

कर्म । अकर्म

विकर्म

कारणवाद ३ । ४०

आरंभ । विवर्त
 परिणाम
 काल ३ । ४२
 भूत
 भविष्यत्
 वर्तमान
 कोश ५ । १०२
 अन्नमय
 प्राणमय
 मनोमय
 विज्ञानमय
 आनंदमय.
 कौशिक ६ । १३०
 त्वक् । मेद
 मास । मज्जा
 रुधिर । अस्थि
 क्लेश ५ । १२०

अविद्या
 अस्मिता
 राम
 द्वेष
 अभिनिवेश
 ख्याति ५ । ११९
 असत्
 आत्म
 अन्यथा
 अख्याति
 अनिर्वचनीय
 गन्ध २ । १६
 सुगंध । दुर्गंध :
 गुण ३ । ४१
 सत्व । रज । तम.
 चैतन्य ७ । १४७
 ईश्वर । प्रमाण

जीव । प्रमेय	तप ।
शुद्ध । प्रमा	विसंवादाभाव
प्रमाता	दुःखनिवृत्ति
जाग्रत ३ । ६२	सुखप्राप्ति
जाग्रत जाग्रत	तत्त्व ९।१६५
जाग्रत स्वप्न	श्रोत्र । मन
जाग्रत सुषुप्ति	त्वक् । बुद्धि
जाति २ । २४	चक्षु । चित्त
पर । व्याप्य	जिह्वा । अहंकार
अपर । व्यापक	घ्राण
जीव ३ । २७	तादात्म्य ३ । ५६
पारमार्थिक (प्राज्ञ)	भ्रमज ।
व्यावहारिक (विश्व)	सहज ।
प्रातिभासिक (तैजस)	कर्मज ।
जीवन्मुक्तिके प्रयोजन	ताप ३ । ३९
५।१.२१	अध्यात्म । अधिभूत
ज्ञानरक्षा ।	अधिदैव ।

त्रिपुटी १४ । १७३

देखो वि. चं. पृष्ठ ९९

दृष्टांत ५ । ११८

शुक्तिविधै रजत

रज्जुविधै सर्प

स्याणुविधै पुरुष

गगनविधै नीलता

मरीचिकाविधै जल

द्रव्यादिपदार्थ ७ । १५५

द्रव्य । समवाय

गुण । अभाव

कर्म । विशेष

सामान्य ।

धर्मादि ४ । १००

धर्म । काम

अर्थ । मोक्ष

घातु ७ । १५२

रस । मज्जा

रुधिर । अस्थि

मांस । रेत

मेद

नाडिका औ देवता

१० । १६६

इडा (चंद्र) हरि

पिंगला (सूर्य) ब्रह्मा

सुषुम्णा (मध्यमा) रुद्र

गाधारी (दक्षिणनेत्र)

इंद्र

हस्तिजिह्वा (वामनेत्र)

वरुण

पूषा (दक्षिणकर्ण) ईश्वर

यशस्विनी (वामकर्ण)

ब्रह्मा

कुहू (गुदा) पृथ्वी

अलंगुसा (मेटू) सूर्य	निःश्रेयस २ । ६
शंखिनी (नाभि) चंद्र	अनर्थनिवृत्ति
नादादि ३ । ६७	परमानंदप्राप्ति
नाद । बिंदु । कला	परमहंससंन्यास २ । १२
निग्रह २ । १३	विविदिषा । विद्वत्
क्रम । हठ	पापकर्म ३ । ३३
नियम ५ । १, १, ३	उत्कृष्ट । सामान्य
शीघ्र	मध्यम
संतोष	पाश ८ । १, ६०
तप	दया । निदा
स्वाध्याय	शंका । कुल
ईश्वरप्रणिधान	भय । शील
निवृत्ति (तादात्म्यकी)	लज्जा । धन
३ । ५७	पुण्यकर्म ३ । ३२
धमज	उत्कृष्ट । सामान्य
सहज	मध्यम
कर्मज	पुरी ८ । १, ५६

ज्ञानेन्द्रियपंचक	पृथ्वी । आकाश
कर्मेन्द्रियपंचक	जल । मन
अतःकरणचतुष्टय	अग्नि । बुद्धि
माणादिपंचक	वायु । अहंकार
भूतपंचक :	प्रतिबंध ३ । ३६
काम	भूत । भावी
त्रिविधकर्म	वर्तमान
वासना	प्रतिबंधनिवृत्तिहेतु
पुरुषार्थ ४ । ८०	४ । ७९
धर्म । काम	शमादि
अर्थ । मोक्ष	श्रवण
पूजापात्र ४ । ९९	मनन
ब्रह्मनिष्ठ	निदिध्यासन
मुमुक्षु	प्रपंच ३ । ४६
हरिदास	स्थूल । सूक्ष्म । कारण
स्वधर्मनिष्ठ	प्रपंच २ । १
प्रकृति ८ । १५७	बाह्य । आवर

प्रमाण ४ । ८८

प्रत्यक्ष । उपमान

अनुमान । शब्द

प्रमाण ६ । १३८

प्रत्यक्ष

अनुमान

उपमान

शब्द

अर्थापत्ति

अनुपलब्धि

प्रलय ५ । ११५

नित्यप्रलय

नैमित्तिकप्रलय

दिनप्रलय

महाप्रलय

आस्रांतिकप्रलय

प्रज्ञा २ । १०

स्थितप्रज्ञा

अस्थितप्रज्ञा

प्राणादि ५ । १०७

प्राण । उदान

अपान । समान

व्यान

प्राणायाम ३ । ५४

रेचक । कुंभक

पूरक

प्रारब्ध ३ । ३५

इच्छा । परेच्छा

अनिच्छा

ब्रह्म ३ । २६

विराट । ईश्वर

हिरण्यगभ

ब्रह्मचर्यके अंग ८ । १५९

स्त्रीका दर्शन

स्पर्शन
 केलि
 कीर्तन
 गुह्यभाषण
 संकल्प
 निश्चय
 क्रियाजन्यसुख
 ब्रह्मविदादि ४ । १२
 ब्रह्मवित्
 ब्रह्मविद्वर
 ब्रह्मविद्वरीयान्
 ब्रह्मविद्वरिष्ठ
 ब्राह्मणकेवत १२ ।
 १७१
 ज्ञान । लज्जा
 तस्य । तितिक्षा
 शम । अनसूया

विपरीत ।
 १७१

दम । यज्ञ
 श्रुत । दान
 अमात्सर्य । धैर्य
 भागवतधर्म १३।१७२
 सकामकर्मके फलका
 विपरीत दर्शन ।
 धनगृहपुत्रादिकविषै
 दुःखबुद्धि औ च-
 लबुद्धि ।
 परलोकविषै नश्वर-
 बुद्धि ।
 शब्दब्रह्म औ परब्र-
 ह्मविषै कुशल गु-
 रुरूपति गमन ।
 गुरुविषै ईश्वरबुद्धि औ
 निष्कपट सेवा ।
 परमेश्वरविषै सर्व कर्म

समर्पण ।
 भक्तिवैराग्यसहित स्व-
 रूपानुभव ।
 साधुसंग ।
 शौच । तप । तितिक्षा ।
 मौन ।
 स्वाध्याय । आर्जव ।
 ब्रह्मचर्य । अहिंसा ।
 औ द्वंद्वसमत्व ।
 सर्वत्र आत्मारूपईश्व-
 रका दर्शन ।
 कैवल्य । ग्रहनबांधना ।
 अनिकेतता । एकांत
 (विविक्त) चीरवस्त्र ।
 संतोष ।
 सर्व भूतनविधै आत्मा-
 के भगवद्भावका

दर्शन औ भगव-
 द्रूपआत्माविधै सर्व
 भूतनका दर्शन ।
 जन्मकर्म वर्णाश्रमा-
 दि करि देहविधै
 निरभिमान औ
 स्वपरबुद्धिका अ-
 भाव । .

भूतग्राम ४ । ९१

जरायुज । उद्विज्ज
 अंडज । स्वेदज

भूमिका ७ । १५०

शुभेच्छा
 सुविचारणा
 तनुमानसा
 सत्त्वापत्ति
 असंसक्ति

पदार्थाभाविनी
तुरीयगा
भूरादिलोक ७।१४८

भूर् । जन

भुवर् । तप

स्वर् । सत्य

महर्

भेद ५।१२५

जीवईशका भेद

जीवजीवका भेद

जीवजडका भेद

ईशजडका भेद

जडजडका भेद

भ्रम ५।११६

भेद । विकार

कर्तृत्व । सत्यत्व

संग

भ्रम ६।१४१

कुल । वर्ण

गोत्र । आश्रम

जाति । नाम

भ्रमविवर्त दृष्टांत ५।

११७

त्रिवप्रतित्रिव

लोहितस्कटिक

घटाकाश

रज्जुसर्प

कनककुंडल

मद ८।१६१

कुल । यौवन

शील । विद्या

धन । तप

रूप । राज्य

महत्ता हेतुधर्म	अव्यक्त
१२ । १७०	अव्याकृत
धनाढ्यता । तेज	अजा
अभिजन । प्रभाव	अज्ञान
रूप । बल	तम
तप । पौरुष	तुच्छा
श्रुत । बुद्धि	अनिर्वचनीया
ओज । योग	मिश्रकर्म ३ । ३४
महायज्ञ ५ । १२२	उत्कृष्ट । सामान्य
देव । मनुष्य	मध्यम
ऋषि । भूत	मूर्ति ३ । ४३
पितर	ब्रह्मा । विष्णु । शिव
मायाकेनाम १५ । १७४	मूर्तिमद ८ । १६०
माया । सखा	पृथ्वी । आकाश
अविद्या । मूला	जल । चद्र
प्रकृति । तुला	तेज । सूर्य
शक्ति । योनी	पवन । आत्ममद

मैत्र्यादि ४।९०

मैत्री । मुदिता

करुणा । उपेक्षा

मोक्षद्वारपाल ४।१०१

शम । विचार

सतोष । सत्संग

मौनादि ७।१५१

मौन

योगासन

योग

तितिक्षा

एकातशीलता

निःस्पृहता

समता

यम ५।११२

अहिंसा । ब्रह्मचर्य

सत्य । अपरिग्रह

अस्तेय

युक्ति ४।९५

अध्यात्मविद्या

साधुसंग

वासनात्याग

प्राणायाम

योगभूमिका ५।११४

क्षेप । एकाग्र

विक्षेप । निरोध

मूढ

योगभूमिका ४।९४

षाणीलय

मनोलय

बुद्धिलय

अहकारलय

रस ६।१४२

मधुर । कटुक

आम्ल । कषाय
 लवण । तिक्त
 रूप ७ । १५४
 शुक्ल । हरित
 कृष्ण । कपिश
 पीत । चित्र
 रक्त
 लक्षण २ । २०
 स्वरूपलक्षण
 तटस्थलक्षण
 लक्षणदोष ३ । ७६
 अव्याप्ति । असंभव
 अतिव्याप्ति
 लिंग ६ । १३२
 उपक्रम उपसहार
 अभ्यास
 अपूर्वता

फल
 अर्थवाद
 उपपत्ति
 लोक ३ । ४६
 स्वर्ग । मृत्यु । पाताल
 वचनादि ५ । १०६
 वचन । रति
 आदान । मलत्याग
 गमन
 वर्ण ४ । ८२
 ब्राह्मण । वैश्य
 क्षत्रिय । शूद्र
 वर्तमान प्रतिबंध ४।७८
 विषयासक्ति
 बुद्धिमांद्य
 कुतर्क
 विपर्ययदुराग्रह

वाक्य २ । १९

अवांतरवाक्य

महावाक्य

वाद २ । १८

प्रतिबिम्बवाद

अवच्छेदवाद

वादादि ३ । ७७

वाद । जल्प । वितंडा

वासना ३ । ४८

लोकवासना

शास्त्रवासना

देहवासना

विकार ६ । १, २९

जन्म

अस्तित्वा

वृद्धि

विपरिणाम

अपक्षय

विनाश

विधिवाक्य ३ । ६९

अपूर्वविधि

नियमविधि

परिसंख्याविधि

विपरीतभावना २।२

प्रमाणगत

प्रमेयगत

विवेकादि ४ । ८४

विवेक

वैराग्य

षट्संपत्ति

मुमुक्षुता

वेद ४ । ८७

ऋग् । साम

यजुष् । अथर्वण

वेदअंग ६ । १३६

शिक्षा । निरुक्त

कल्प । छद्

व्याकरण । व्योतिष

वेदके काण्ड ३ । ७०

कर्म । ज्ञान

उपासना

व्यसन ७ । १५३

तन । धन

मन । राज्य

क्रोध । सेवकव्यसन

विषय ।

शब्द ७ । १५

वर्णरूप

ध्वनिरूप -

शब्दमवृत्तिनिमित्त

४ । ८१

जाति । क्रिया

गुण । सवध

शब्दशक्तिग्रहणहेतु

८ । १६३

व्याकरण

उपमान

कोश

आप्तवाक्य

वृद्धव्यवहार

वाक्यशेष

विवरण

सिद्धपदकी सम्भिधि

शब्दसंगति ७ । ७५

शक्तिवृत्ति

लक्षणावृत्ति

शब्दादि ५ । १०४

शब्द । रस

स्पर्श । गंध	शृंगारादि रस १० ।
स्पर्श । गंध	१६७ ।
शमादि ६ । १३९	शृंगार । भयानक
शम । तितिक्षा	वीर । बीभत्स
दम । श्रद्धा	करुणा । रौद्र
उपरति । समाधान	अद्भुत । शांति
शरीर ३ । १८	हास्य ॥ प्रेमभक्ति
स्थूल । कारण	श्रवणादि ३ । ४९
सूक्ष्म	श्रवण । ५० ।
शास्त्र ६ । १३४	मनन ।
सांख्य ।	निदिध्यासन
योग ।	श्रवणादिफल ३ । ५०
न्याय ।	प्रमाणसंशयनाश
वैशेषिक	प्रमेयसंशयनाश
पूर्वमीमांसा	विपर्ययनाश
उत्तरमीमांसा	संशय २ । ७
	प्रमाणगत

प्रयेगत ।
 संन्यास ४ । ९३
 कुटीचक
 बहूदक
 हंस । ।
 परमहंस
 संपत्ति २ । २१
 दैवी । आसुरी
 समाधि २ । ११
 सविकल्प
 निर्विकल्प
 समाधि ६ । १२७ -
 बाह्यदृश्यानुविद्ध
 आंतरदृश्यानुविद्ध
 बाह्यशब्दानुविद्ध
 आंतरशब्दानुविद्ध
 बाह्यनिर्विकल्प

आंतरनिर्विकल्प
 समाधिके अंग ८ । १५८
 यम ।
 नियम ।
 आसन
 प्राणायाम
 प्रत्याहार
 धारणा
 ध्यान
 सविकल्पसमाधि
 समाधिविघ्न ४ । ८९
 लय । कषाय
 विक्षेप । रसास्वाद
 संबंध ३ । ३७
 संयोग । तादात्म्य
 समवाय
 संसार ९ । १६४

ज्ञाता । भोग
 ज्ञान । कर्ता
 ज्ञेय । करण
 भोक्ता । क्रिया
 भोग्य
 सुषुप्ति ३ । ६४
 सुषुप्तिजाग्रत
 सुषुप्तिस्वप्न
 सुषुप्तिसुषुप्ति
 सुषुप्त्यादि ३ । ६९
 सुषुप्ति । समाधि
 मूर्छा
 सूत्र ६ । १३६
 जैमिनीय
 आश्वलायन
 आपस्तंब
 बौधायन

कात्यायन १
 वैखानसीय
 सूक्ष्मभूत ५ । ११०
 शब्द । रस
 स्पर्श । गंध
 रूप
 सूक्ष्मशरीर २ । ३
 समष्टि । व्यष्टि
 स्थूलभूत ५ । १११
 आकाश । जल
 वायु । पृथ्वी
 तेज
 स्थूलशरीर २ । ४
 समष्टि । व्यष्टि
 स्पर्श ४ । ९६
 शीत । कोमल
 उष्ण । कठिन

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी.

वेदांतपुस्तकालय—कराची.

बहुतकरिके संस्कृत तथा भाषाके छपे हुए सर्व वेदांत-विषयक ग्रंथ हमारे यहांसे मिल सकते हैं ॥ कोई भी ग्रंथ लेनेकी इच्छावालेकूं ग्रंथकी कीमत तथा डाक महसूल जनाया जावेगा । उत्तरके लिये इचलकार्ड भेजना ॥

- नीचे लिखे ग्रंथनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र बेल्युपेएवलका डाककमीशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर, ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-
स्त्रावलि तथा बड़ी अक्षरादि अनुक्रमणिकास-

हित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृत्ति २।

„ उक्ततृतीयावृत्ती उत्तमकागदकी. ३

श्रीमटीका अष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागदका. १।।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०।।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें १५

(योदेही ग्रंथ रहे है । बहुत करिके फेर छपनेकी नहीं)

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण... .. ०।।

श्रीपंचदशीका प्रथम और पंचम प्रकरण. ...	१
श्रीपंचदशी मूलमात्र.	०॥८
श्रीईशाद्व्यष्टोपनिषद् । मूल और श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीय.	४
श्रीवालबोध टीकासहित.	०॥८
„ उक्तग्रंथ चिन्तित कपड़ेके पृष्ठसहित.	१
श्रीपदार्थमञ्जूषा (वेदांतपदार्थ कोश)	४
श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जर भाषा	०।-

श्रीवेदांतविनोद.

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ ति-
नमें वेदांतपदावलि तथा वेदांतपदार्थसंज्ञा छपे हैं ॥
प्रत्येक अंककी कीमत ०)८ रत्नो है । और कोशकी ७
अंकका मान ६० ०॥॥ पड़ेगा.

- | | |
|---|--------------------------------------|
| १ वेदांतपदावलि (श्रीविचारचं-
द्रोदयका सार) | ५ अलम्बितके पद. |
| २ वेदांतपदार्थसंज्ञा. | ६ प्रस्ताविक श्लोक अर्थ
सहित. |
| ३ सूफीओंके गजल. | ७ वेदांतस्तोत्र संग्रह अर्थ
सहित. |
| ४ देवामृतके पद. | |

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ ऊपरि लिखे कमसे
नहीं परंतु समयसमय अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ १ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत
भाषादीपिका सहित
सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंसदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४४-५५ १८८८ ।

(प्रकटकर्ताने सर्वहक स्वाधीन रखे हैं)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद बंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों जिस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद ?

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कंठ करते हैं । परंतु
निष्ठाकी आरुढ़तामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तातें परमकाद-
णिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीनें दयाकरिके स्तो-
त्रनकी भाषा करी है । औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकूं
पी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । तातें मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकूं रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस तृतीयअंकमें जितनै स्तोत्र छपे
हैं सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

औ अन्य स्तोत्र दो चतुर्थादिअंकोंविषे छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.



तावद्गर्जति शास्त्राणि जंबुका विपिने यथा ॥
न गर्जति महाशक्तिर्यावद्देदांतकेसरी ॥ १ ॥

अर्थः—जैसे वनविपे श्याल नामक पशुवि-
शेष तहांलगि गर्जते हैं । जहांलगि सिंह नहीं गर्ज-
ता है ॥ जैसे अन्य सांख्यन्यायादिक-शास्त्र तहां-
लगि गर्जते हैं । जहांलगि महाशक्तिमान्
वेदांतशास्त्ररूप सिंह नहीं गर्जता है ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

तृतीयअंक ॥ ३ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ १ ॥

अथ श्रीप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

॥ वसंततिलका छंदः ॥

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदोत्पतच्चं
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ॥

यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं

तेर्ब्रह्म निष्कलमहं नै च भूतसंघः ॥१॥

अर्थः—१प्रातःकालमें २हृदयकमलविषै अं-
तःकरण औ तोकी वृत्तिनका साक्षी होनेकरि
अहंवृत्तिविषै स्वयंप्रकाशरूपकरि स्फुरायमान
(भासमान) । ३सच्चिदानंदमय परमहंसोकी ग-

तिरूप तुरीयस्वरूप जो ४आत्मतत्त्व है । ताकूँ
 ९में स्मरण करूँ हूँ ॥ कैसेँ कि:-६ जो स्वम जाग्रत्
 अह सुपुतिकूँ जानता है । औ नित्य (उत्पत्ति
 अह नाशसेँ रहित) है । औ ७निष्कल (निर-
 वयव) है । औ ८ब्रह्म (सर्वसेँ अधिकव्यापक
 परमात्मा) है । ९सो १०में हूँ । ११ अह पंचभू-
 तनका समुदाय में १२नहीं हूँ ॥ १ ॥

प्रातर्भजामि मेनसो वचसामगम्यं

वाचो विभांति निखिला यदनुग्रहेण ॥

यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचु-

स्तं देवदेवमजयच्युतमांहुरग्र्यम् ॥ २ ॥

अर्थ:-१प्रातःकालमें २मन अह वाणीओके
 अविषय । औ ३सर्व ४वाणीआं ५निसके अ-
 नुग्रहसेँ ६भान होवै हैं । औ ७जाकूँ “नेतिनेति”
 [मपंचके निषेधक]वचनोकरिके वेद कहते है ।

३ प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥ [विदांत

औं जाकूं ब्रह्मवेत्ते तदेवनका- देव अजन्मा अ-
च्युत अरु ९मुख्य १०कहते हैं । ११ताकूं
१२में भजता हूं ॥ २ ॥

प्रातर्नमामि तैमसः परमर्कवर्ण

पूर्ण सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ॥

यैस्मिन्निदं जगदंशेषमंशेषमूर्तौ

रंज्ज्वां भुजंगम इव प्रतिभासितं वै ॥३॥

अर्थः—१प्रातःकालमें २अज्ञानमें पर स्वम-

काश पूर्ण सनातनपद पुरुषोत्तम नामक । औं

३सर्व मूर्तिरूप धजिसविषै यह ५संपूर्ण ६जगत्

७रज्जुविषै सर्पकी न्याई भासमान है । [ताकूं]

८में अभेदनिश्चयरूप नमस्कार करूं हूं ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप छंदः ॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् ॥

प्रातःकाले पठेद्यस्तु सै गच्छेत्परमं पदम् ४

बिनोद ३] प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ॥ १ ॥

४

अर्थः—१इन पुण्यरूप औ त्रिलोकीके विभूष-
णरूप २तीनश्लोकनकूं ३जो ४प्रातःकालविषै
पठन करै ५सो ६परमपदकूं ७पावै ॥ ४ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्य-
विरचितं प्रातःस्मरणस्तोत्रं समाप्तम् ॥१॥



ॐ

अथ श्रीचर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

॥ छंदः ॥

भज गोविंदं भज गोविंदं

भज गोविंदं मूर्धपते ॥

मैत्रे सन्निहिते मरणे

नदि नदि रक्षति हुंकृष्करणे ॥ भज० ॥ १ ॥

अर्थः—काहू समयमें जगद्गुरु श्रीमत्शंकराचार्यस्वामीजी ब्राह्मणोंके गृहविषे भिक्षाटन करनेकूं पधारे थे ॥ तहां किसी शास्त्रवासनाके आवेश-पाला कोइएक वृद्धब्राह्मण व्याकरणका प्रारंभ करिके “हुंकृष् करणे” शब्दका घोष करता था । निम्नहूं देखिके अत्यंतकरुणाविष्ट हुये श्री-शंकर बहने भयेः—

१ मरणके २ समीपमें ३ प्राप्त भये । जार्ते ४ “हु-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ ६

कृष्ण करणे" ५ नहीं रक्षा करै है । नहीं रक्षा करै
है यातै ईहे मूढमते !, ७ गोविंदकूं ८ भज । ९ गो-
विंदकूं १० भज । ११ गोविंदकूं १२ भज ॥ १ ॥
बालस्तावत्कीडासक्त-

स्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः ॥

वृद्धस्तावच्चितामयः

परे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः ॥ भज० ॥ २ ॥

अर्थः—बालक है तहांलगि खेळमें आसक्त है ।
युवा है तहांलगि स्त्रीविषै प्रीतिमान् होवै है । औ
वृद्ध है तहांलगि चिंतामे मग्न रहै है । परंतु
परब्रह्मविषै कोई बी लग्न होता नहीं । तति
विचक्षण हुया तूं अब गोविंदकूं भज ॥ १ ॥

अंगं गलितं पलितं मुंडं^२

देशनविहीनं जातं तुंडं^३ ॥

वृद्धो याति शृंहित्वा दंडं^४

तदपि न मुंचसाशां पिंडम् ॥ भज० ॥ ३ ॥

७ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [विदांत

अर्थः—१अंग गलित भया । २शिर ३श्वेतके-
शयुक्त भया । ४मुख ५दंतरहित भया । ६वृद्ध
हुया ७दंडकूं ८पकरिके ९चलता है । १०तौबी
११आशाके पिंडकूं १२छोडता नहीं । तर्तै
तूं अब ताके दाहअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ३ ॥

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं

पुनरपि जननीजठरे शयनम् ॥

इह संसारे खलु दुस्तारे

कृपयाऽपारे पाहि मुरारे ॥ भज० ॥ ४ ॥

अर्थः—१इस २दुस्तर ३अपार ४संसारविषै
५फेर बी जन्म । फेर बी मरण । फेर बी माताके
उदरविषै शयन होवै है । तर्तै ६“हे मुरारे ।
तूं ७कृपा करी ८रक्षण कर” एसै प्रार्थना करिके
तूं गोविंदकूं भज ॥ ४ ॥

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥

दिनमपि रजनी सायं प्रातः

शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ॥

कालः क्रीडति मञ्चल्योयु-

स्तदपि न मुंचयाशावायुः ॥ भज० ॥५॥

अर्थः—१ दिनरात्रि सायंप्रात शिशिर अरु
वसंत बी फेर आवता है । काल खेलता है ।

२ आयु ३ जाता है । ४ तौ बी ५ आशारूप वायु
६ छोडता नहीं । तातैं तूं हृदयत्नकरिके बी

गोविंदकूं मन ॥ ५ ॥

जटिलो मुंठी लुंचितकेशः

कापायांबरबहुधृतवेषः ॥

पश्यन्नपि न च पश्यति लोकै

उंदरनिमित्तं बहुकृतशोकः ॥ भज० ॥६॥

अर्थः—१ जटाधारी । मुडित । लुंचित केशोंवा-
ला अरु कापायांबरकरि बहुतवेषनके धारनेवाला ।

९ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [विदांत

औ १ उदरनिमित्त बहुशोकका करनेवाला ३ लोक ।
पाप आदिककूं ४ देखता हुआ वी नहीं देखता
है । तार्ते तूं अट्टएके भरोसे अदंभी हुआ गो-
विंदकूं भज ॥ ६ ॥

वयसि गते कः कामविकारः

शुष्के नीरे कः कासारः ॥

क्षीणे वित्ते कः परिवारो

ज्ञाते तच्च कः संसारः ॥ भज० ॥ ७ ॥

अर्थः—जैसे १ वयके गये २ कामविकार ३ कौ-
न है ? ४ जलके ५ सूके हुये ६ ताल ७ कौन है ?
८ धनके ९ क्षीण भये १० परिवार ११ कौन है ? तैसे
१२ तच्चके १३ जाने हुये १४ संसार १५ कौन है ?
तार्ते तूं तच्चज्ञानअर्थ गोविंदकूं भज ॥ ७ ॥

अग्ने वह्निः पृष्टे भानू

रात्रौ चिबुकसमर्पितजातुः ॥

विनोद ३]. चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ १०

करतलभिक्षा तरुतलवास-

स्तदपि नै मुंचत्याशापाशः ॥ भज० ॥ ८ ॥

अर्थः—१ आगे अग्नि है । पीछे सूर्य है । रात्रि-
में हनुवटीविषे धरे जानुवाला है । करतलमें
भिक्षा है । तरुतलमें वास है । तौबी २ आशारूप
पास ३ छोड़ता नहीं । तर्ति तूं गोविंदकूं भज ॥ ८ ॥

यावद्विचोपार्जनसक्त-

स्तावन्निजपरिवारो रक्तः ॥

पथाज्जैर्जरभूते देहे^३

वार्ता कोऽपि नै पृच्छति मेहे ॥ भज० ॥ ९ ॥

अर्थः—१ जहांलगे धनसंपादनमें समर्थ होवै
तहांलगे स्वकुटुंब प्रीतिमात् होवै है । पीछे २ दे-
हेके ३ जीर्ण भये ४ गृहविषे ५ कोई वी ६ वात-
७ पूलता नहीं । तर्ति तूं कुटुंबासक्ति छोड़िके गो-
विंदकूं भज ॥ ९ ॥

११ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [विदांत

रंध्याकर्पटविरचितकंधः

पुण्यापुण्यविवर्जितपंथाः ॥

नै त्वं नैहं नैर्यं लोक-

स्तदपि किमर्थं क्रियंते शोकेः ॥ भज० १०

अर्थः—१मार्गके जीर्णवस्त्रके खंडीकरि रची है कंधा जिसने । औ पुण्यपापकरि रहित है मार्ग जिसका । “ औ २तूं ३नहीं । ४में ५नहीं । ६यह लोक ७नहीं है । ” (ऐसें जान्या है जिसने)
८तौ बी किसअर्थ ९शोक १०करिये है ? ततिं शोकरहित हुआ तूं गोविंदकूं भज ॥ १० ॥

नारीस्तनभरजघननिवेशं

दृष्ट्वा मायामोहावेशम् ॥ ११

ऐतन्मांसवसादिविकारं

मनसि विचारय वारंवारम् ॥ भज० ११

अर्थः—१माया औ मोहके आवेशवाले २ना-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ १२

रीके स्तनोंके भार अरु जघनरूप स्थानकूं देखि-
के .३इसकूं मांस अरु नाहीआदिकका विकार
मनविषै ४वारंवार ९विचार कर । अरु गोविंदकूं
भज ॥ ११ ॥

मेयं^२ गीतानामसहस्रं

द्वयेयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ॥

नेयं^६ सज्जननिकटे चित्तं

देयं^{१०} दीनजनाय च वित्तम् ॥ भज० ॥ १२ ॥

अर्थः—१गीता अरु नामोंका सहस्र २गावनै
योग्य है । ३श्रीपतिका रूप निरंतर ४ध्यावनै
योग्य है । ५सज्जनोंके समीपमें चित्त ६देनैकूं
योग्य है । ७औ ८दीनजनके वास्ते ९वित्त १०देनै
योग्य है । ऐसै करते हुये तूं गोविंदकूं भज ॥ १२ ॥

भगवद्गीता किंचिदधीता

गंगाजललवकणिका पीता ॥

१३ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

येनाकारि मुरारेरर्चा

तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम् ॥ भज० ॥ १३

अर्थः—१जिसने २भगवद्गीता कलुक पढी है
औ गंगाजलकी लवकनिका पान करी है औ
३मुरारिकी पूजा ४करी है । ५ताकी ६चर्चाकूं
७यमराजा क्या करता है ? किंतु नहीं करता है ।
यातें ऐसा हुया तूं गोविंदकूं भज ॥ १३ ॥

कोऽहं कस्त्वं कुत आयातः

कां मे जननी को मे तातः ॥

'इति परिभावय सर्वमसारं

सर्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥ भज० १४

अर्थः—१मैं २कौन हूं ? ३तूं ४कौन है ? ५क-
हांतें आया है ? ६मेरी जननी ७कौन है ? ८मेरा
तात ९कौन है ? १०ऐसे ११स्वप्नतुल्य विचार-

विनोद ३] चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ १४

वाला हुआ १२सर्वकूं असार १३भावना कर ।
औ १४सर्वकूं त्यागिके गोविंदकूं भज ॥ १४ ॥

का ते' कांता कंस्ते^३ पुत्रः

संसारोऽयमतीव विचित्रः ॥

कंस्य त्वं कंः कुत आयात-

स्ते^३त्वं चित्तंय मनसि श्रातः ॥ भज० १५

अर्थः--१तेरी कांता २कौन है ? ३तेरा पुत्र
४कौन है ? ५यह ६संसार ७अतिशयही विचित्र
है ॥ ८तुं ९कौनका है ? १०कौन है ? कहां-
ते आया है ? ११हे भाई ! १२तच्चकूं १३मन-
विषे १४चित्तन कर । अरु गोविंदकूं भज ॥ १५ ॥

धुरतटिर्नितरूपूलनिवासः

शैथ्या भूतलमजिनं वासः ॥

सर्वपरिग्रहभोगत्यागः

कंस्य सुखं न करोति विरागः ॥

१९ चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ॥ २ ॥ [वेदांत

भैज गोविंदं भैज गोविंदं

भैज गोविंदं मूढमते ॥ १६ ॥

अर्थः—१ गंगाके तीरके तरुके मूलमें निवास है । २ भूतलरूप ३ शय्या है । ४ मृगचर्मरूप वस्त्र है । अरु सर्व परिग्रह औ भोगका त्याग है जिसविषे । ऐसा जो ५ विराग । सो ६ किसकूं सुख नहीं करै है ? किंतु सर्वकूं करै है । यातैं तूं विरक्त हुआ । ७ हे मूढमते ! ८ गोविंदकूं ९ भज । १० गोविंदकूं ११ भज । १२ गोविंदकूं १३ भज ॥ १६ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकरा-
चार्यविरचितं चरपटपंजरिकास्तोत्रं
समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ श्रीमुक्तिपंचकम् ॥ ३ ॥

॥ शिखरिणी छंदः ॥

विहायैः कृत्वा

ऋतुविधुरकर्मादि विहितं

र्थियं संशोभ्याऽऽर्वा-

चिदचिदवलोकादिनिकरम् ॥

सैमाराध्याऽऽचार्यं

नेतिविमतिशुश्रूषणमुखैः

प्रपन्नः सन् पृच्छेद्

चिदिदिपितपात्मीयमखिलम् ॥ २ ॥

अर्थः—१ विहित (शुभ) अरु २ फलके संक-
ल्पसं रहित कर्म अरु उपासनाकूं ३ करीके ।
४ पाप (मलविशेष) कूं ५ त्यागीके । ६ बुद्धिकूं
शोधनकारिके ७ चिद् जडके विवेकआदिक सा-
धनाका समूह ८ प्राप्तकारिके ॥ फेर ९ नमस्कार

प्रश्न अरु सेवाआदिक उपायोकरि १० आचार्य
 (गुरु) कूं ११ सम्यक् आराधन (प्रसन्न) करिके
 १२ शरणागत हुया १३ आपके १४ जाननेकूं वांछित
 १५ सकल अर्थकूं [अधिकारी] १६ पूछे ॥ १ ॥

विचार्याऽऽत्मानं स्वं

श्रुतिगदितसच्चित्तुखमयं

परं ब्रह्मास्मीति

श्रवणमननध्यानकरणैः ॥

अहं ब्रह्मास्मीति

दृढर्मवर्गातिं गम्य परमां

विर्वाधयेदं दृश्यं -

संकलमलमज्ञानसहितम् ॥ २ ॥

अर्थः—१ गुरुके पास श्रुतिप्रतिपादित सच्चि-
 दानंदस्वरूप २ अपने ३ आत्माक ४ "मैं परब्रह्म
 हूँ" ऐसी ५ विचारिके । फेर ६ श्रवण मनन अरु

निदिध्यासनरूप साधनोकरि "मैं ब्रह्म हूँ"
 ऐसी ७सर्वोत्तम ८विद्याकूं ९दृढ जैसे होवै तैसें
 १०पायके । ११अज्ञान सहित १२इस १३स-
 कल १४दृश्यकूं १५अत्यंत १६साधकरिके
 [स्थित होवै] ॥ २ ॥

विदित्वेत्थं तत्त्वं

निखिलनिगमांतौनिगदितं

निहत्वाऽनर्थं वै

सकलमपि जीवांतुसहितम् ॥

परानंदो भूत्वा

भवति ॐ वि भव्यो भपतिभो

विधेयं कर्त्तव्यं

विविविधमपि हेयं हृदि गतम् ३

अर्थः—१ऐसें २सकलवेदांतोकरि प्रतिपादित
 ३तत्त्वकूं ४जानिके । ५कारणसहित इसकल



वी ७ अनर्थकं < अपरोक्षबाध करिके । ९ परमा-
नंदरूप होयके १० भूमिविषै श्रेष्ठचंद्रमा जैसी
कांतिवाला (शांत) ११ होवै है ॥ ऐसैं हुये
१२ विधान करने योग्य १३ हृदयगत २४ विविध
प्रकारका वी १५ कर्तव्य १६ त्यागनेकूं योग्य
होवै है ॥ ३ ॥

मुंदो जीवन्मुक्ते-

यदि हृदि धनीषा स्वविदुष-
स्तदाऽऽर्हात्तं वृत्ते-

रनिर्गमैभिकुर्वन् चंद्रुत्तिथम् ॥

विनाशैव स्थौल्यं

मैलिनतरसत्वस्य मनसः

मुंसत्वाविर्भावान्

परमसुखासिधौ हि सुरमेव ॥ ४ ॥

अर्थः—१ फेर जो २ स्वस्वरूपके वेत्ता (ज्ञानी)

कूं जो ३हृदयविषै ४जीवन्मुक्तिके ५विलक्षण-
 आनंदकी ६इच्छा होवै ७तो । ८निरंतर अरु
 ९दीर्घकाल १०ब्रह्माकारवृत्तिकी ११आवृत्तिकूं
 १२करता हुआ १३अत्यंत मलिन (रजतमसैं
 तिरस्कृत) है सत्वगुण जिसका । ऐसैं मनके
 १४स्थूलभाव (रजतमकरि सत्वगुणके तिरस्का-
 र) कूं [ब्रह्माभ्यासके बलसैं रजतमके तिर-
 स्कारद्वारा] १५विनाश करिके (ऐसैं मनोनाश-
 कूं करिके) हौं । १६शुद्धसत्वगुणके आविर्भा-
 वतैं निरतिशयसुखके समुद्रविषे निरंतरहीं र-
 मण करै ॥ ४ ॥

सुभूमिं प्राप्येमां

परमसुखदां पंचममुखां

सुखं भुक्त्वा ब्रह्मं

दृढतरनिजारब्धमपि वै ॥

विलोप्येदं वि^३भं

जंगदगमयं हेतुसहितं

चिदानंदे शुद्धे

भजति च^{१५} विदेहामृतमयम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इस (उक्तप्रकारकी) जीवन्मुक्ति-
के विलक्षणआनंदकी देनेहारी पंचमआदिक २श्रे-
ष्ठभूमिका (चित्तकी अवस्थाविशेष)कूं पायके-
३ब्रह्मके ४सुखकूं ५औ ६दृढतर (प्रयत्नसैं अ-
मेट) स्वप्नारब्धकूं बी ७भोगिके । ८हेतु (अ-
ज्ञानकी विक्षेपहेतुशक्ति) करि सहित ९इस (दृश्य-
मान) १०चराचररूप ११विश्वकूं १२शुद्ध १३चि-
दानंद ब्रह्मविषै १४विलय (नाश) करिके १५यह
ज्ञानी १६विदेहमोक्षकूं १७बी १८पावता है ॥५॥

॥ इति श्रीमत् वापुपूज्यपादशिष्य पीतांब-
राहविदुषा विरचितं सेटीकं मुक्ति-

पंचकं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ श्रीविज्ञाननौका ॥ ४ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

तपोयज्ञदानादिभिः शुद्धबुद्धि-

विरक्तो नृपादौ पदे तुच्छबुद्ध्या ॥

परित्यज्य सर्वं यदाप्नोति तत्त्वं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ १ ॥

अर्थः—१तप यज्ञ अरु दानादिककरि शुद्धबुद्धिवाला औ २राज्यआदिकपदविषै तुच्छबुद्धिकरि के ३विरक्त भया पुरुष । ४सर्वकूं ५परित्यागकरि के ६जिस ७तत्त्वकूं ८पावता है । ९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२मैं हूं ॥ १ ॥

देयालुं गुरुं ब्रह्मनिष्ठं प्रशांतं

समाराध्य भक्त्या विचार्य स्वरूपम् ॥

येदांप्रोति तत्त्वं निर्दिध्यास्य विद्वान्

परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ २ ॥

अर्थः—१दयालु २ब्रह्मनिष्ठ अह परमशांत
३गुरुकृं ४भक्तिसौ ५सम्यक् आराधनकरिके ।
६स्वरूपकृं ७विचारिके (श्रवणमननकरिके) ।
फेर <निदिध्यासनकरिके विद्वान् हुआ । ९जिस
१०तत्त्वकृं ११पावता है । १२सोई १३नित्य
१४परब्रह्म १५मैं हूं ॥ २ ॥

येदानंदरूपं प्रकाशस्वरूपं

निरस्तप्रपंचं परिच्छेदशून्यम् ॥

अहं ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ३ ॥

अर्थः—१जो आनंदरूप प्रकाशस्वरूप निष्प्र-
पंच तीनपरिच्छेदते रहित । “मैं ब्रह्म हूं” । इस

एकवृत्तिकरि गम्य अरु तुरीयरूप है । २सोई
३नित्य ४परब्रह्म ५में हूं ॥ ३ ॥

यैदज्ञानतो भाति विश्वं समस्तं
विनष्टं चै सद्यो यैदात्मप्रबोधे ॥

मनोवागतीतं विशुद्धं विमुक्तं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवार्हमस्मि ॥ ४ ॥

अर्थः—१समस्त २विश्व ३जाके अज्ञानतै
भासता है । ४औ ५जाके स्वरूपके प्रबोध हुये
६सद्यः ७विनाशकूं प्राप्त होवै है । ऐसा जो-
८मनवाणीका अविषय विशुद्ध औ विमुक्त है ।
९सोई १०नित्य ११परब्रह्म १२में हू ॥ ४ ॥

निषेधे कृते नैतिनेतीति वाक्यैः

समाधिस्थितानां यदाभाति पूर्णम् ॥

अवस्थात्रयातीतमद्वैतमेकं

परं ब्रह्म नित्यं तदेवार्हमस्मि ॥ ५ ॥

अर्थः—१ “नेतिनेति (कारण नहीं औ कार्य नहीं)” ऐसैं वाक्यनकरि २निषेधके कियेहुये । ३समाधिविषै स्थित पुरुषनकूं ४पूर्ण तीनअव-
स्थातैं रहित अद्वैत औ एकरूप ५जो भासता है ।
६सोई ७नित्य ८परब्रह्म ९में हूं ॥ ५ ॥

यदानंदलेशैः समानंदि विश्वं

यदाभाति सत्त्वे तदाभाति सर्वम् ॥

यदालोचने हेयमन्यत्समस्तं

'परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ६ ॥

अर्थः—१जाके आनंदके लेशों(प्रतिबिंबों)-
करि २विश्व ३सम्यक् आनंदवान् होवै है ।
औ ४जिसके आभाति (प्रभा)के सद्भावके हुये
सो ५सर्व ६भासता है । औ ७जाके आलोचनके
हुये ८अन्य समस्त ९त्याज्य होवै है । १०सोई
११नित्य १२परब्रह्म १३में हूं ॥ ६ ॥

अनंतं विभुं सर्वयोनिं निरीहं
शिवं संगहीनं यदोकारगम्यम् ॥

निराकारमत्युज्ज्वलं मृत्युहीनं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ७ ॥

अर्थः—१जो २अनंत। विभु (व्यापक)। सर्व-
योनि (सर्वका कारण)। निरीह (निष्क्रिय)।
शिव (कल्याणरूप)। असंग। ३ओंकारकरि गम्य।
निराकार। अतिउज्ज्वल औ मृत्युरहित है। ४सोई
५नित्य ६परब्रह्म ७मैं हूं ॥ ७ ॥

यदानंदसिधौ निमग्नः पुमान्स्यो-
दविद्याविलासः समस्तप्रपंचः ॥

तैदा नं स्फुरत्यद्भुतं यन्निमित्तं
परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ॥ ८ ॥

अर्थः—१जब २पुरुष ३आनंदसमुद्रविषै नि-
मग्न ४होवै है। ५तब ६अविद्याका कार्य सम-

स्तप्रपंच ७स्फुरता नहीं । किंतु अद्भुतरूप जो
आनंदका निमित्त स्फुरता है । ८सोई ९नित्य
१०परब्रह्म ११मै हूं ॥ ८ ॥

स्वरूपानुसंधानरूपां स्तुतिं यैः

पठेद्दादराद्भक्तिभावो मनुष्यः ॥

शृणोतीह वा नित्यमुद्युक्तचित्तो

भवेद्विष्णुरत्रैव वेदप्रमाणात् ॥ ९ ॥

अर्थः—१जो २मनुष्य ३भक्तिभाववाला हुआ
४स्वरूपके अनुसंधानरूप इस स्तुतिकूं ५आद-
रते ६पठन करे । ७वा ८इहां ९नित्य उद्योगवान्
चित्तवाला हुआ १०सुनताहै । सो ११इहांहीं जी-
वत अवस्थाविषै वेदरूप प्रमाणते १२विष्णुरूप
१३हेवैगा ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता श्रीमच्छंकरा-
चार्यविरचिता विज्ञाननौका समाप्ता ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतपुस्तकालय ॥

शरीफ सालेमहंमदकी कंपनी.—कराची.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

बहुतकरिके संस्कृत तथा भाषाके छपे हुये सर्व वेदांत-
विषयक ग्रंथ हमारे नहांसे मिल सकते हैं ॥ कोई भी ग्रंथ
लेनेकी इच्छावालेकू ग्रंथकी कीमत तथा डाक महसूल
जनाया जावेगा । उत्तरके लिये डवलकार्ड भेजना ॥

नीचे लिखे ग्रंथनका डाक महसूल नहीं पड़ेगा
मान वेत्युपेएपलका डाककमीशन पड़ेगा ॥

श्री विचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावलि तथा बड़ी अकारादि अनुक्रमणिकास-

हित तृतीयावृत्ति ३१

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ४१

श्रीसुंदरविलास । हानसमुद्र आदिक तृतीयावृत्ति २१-

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उन्नम पृठे औ कागजका.... .. १॥१

श्रीविचारचन्द्रोदय । तृतीयावृत्ति ०॥१

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(दोबेही ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण....	०॥१
श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण.	१
श्रीपंचदशी मूलमात्र....	०॥०
श्रीईशाद्वयोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य अनुसार हिंदुस्थानीमें.	४
श्रीवालबोध टीकासहित.	०॥०
„ उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूठेसहित.	१
श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे ६०४ पे) ३			
श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा			०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें *ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०।-॥ रखी है । औ कोड़ी ६ अंकाका मात्र ६० ०॥ पड़ेगा.

*१ वेदांतपदावलि (श्रीविचारधं- ५ अस्त्रामक्तके पद.

त्रोदयका सार)

६ प्रस्ताविकश्लोक अर्थ-

*२ वेदांतपदार्थसंज्ञा.

सहित.

३ सूफीओंके गजल.

*७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-

४ देवाजीमक्तके पद.

सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ ऊपरि लिखे क्रमसे नही परंतु समयसंयोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ २ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत
भाषादीपिकासहित

सर्वसुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४४-सन् १८८८ ।

(प्रकटकर्ताने सर्वहृष स्वाधीन रहे हैं)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सवे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत सस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कठ करते हैं । परंतु
निष्ठाकी आरूढतामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तार्ति परमशुद्ध-
गिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपोताबरजीनें दयाकरिके स्तो-
त्रनकी भाषा फरी है । औ सस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकू
षी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवे । तार्ति मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अर्थकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इन चतुर्थअंशमें जितने स्तोत्र छपे
हैं । सो नीचे लिखे हैं —

श्रीआत्मपट्टकस्तोत्रम् ॥ ५ ॥

श्रीआत्मचित्तनम् ॥ ६ ॥

श्रीनिर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥

श्रीआत्मपंचकम् ॥ ८ ॥

औ अन्य स्तोत्र पी पंचमादिअर्थोंविषे छपे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्री वेदांतविनोद ॥

चतुर्थअंक ॥ ४ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ २ ॥

॥ अथ श्रीआत्मपदकस्तोत्रम् ॥२॥

॥ भुजंगप्रयातं छेदः ॥

मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं

नं चै श्रोत्रजिह्वे नं चै घ्राणनेत्रे ॥

नं चै न्योमभूमी नं तेजो नं वायु-

त्रिंदांनंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—१मैं २मन बुद्धि अहंकार अह चित्त नहीं हूं। ३औं श्रोत्र औं जिह्वा इनहीं हूं। ५अह घ्राण अह नेत्र इनहीं हूं। ७औं आकाश अह भूमि

२ आत्मपट्टकस्तोत्रम् ॥ ५ ॥ [विदांत

८नही हूं। अरु ९तेज १०नही हूं। अरु ११वायु
१२नहीं हूं। किंतु १३चिदानंदरूप शिव में हूं।
शिव में हूं ॥ १ ॥

अहं प्राणवर्गो न पंचानिला मे^४

न तोयं न मे^५ धातवो नैवं^६ कोशाः ॥

नै^७ वीक्षपाणिपादौ नै^८ चोपस्थपायू

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥२॥

अर्थः—१में २जल अरु ३प्राणवर्ग नहीं हूं। ४

मेरे ५पांच वायु इनहीं हैं। ६मेरे धातु ८नहीं

हैं। औ ९कोश १०नहीं हैं। औ ११वाक् पाणि

अरु पाद १२नहीं हैं। १३औ उपस्थ अरु पायु

१४नहीं हैं। किंतु १५चिदानंदरूप शिव में हूं।

शिव में हूं ॥ २ ॥

नै मे^१ द्वेपरागौ नै मे^२ लोभमोही

मदो नैव मे^३ नैव भौत्सर्यभानम् ॥

नं धर्मो नं चार्थो नं कामो नं मोक्षं-

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१मेरेकूं द्वेष अहू राग २नहीं हैं । अहू
३मेरेकूं लोभ अहू मोह ४नहीं हैं । अी ५मेरेकूं ई
मद नहीं है । अी ७मत्सरभावका मान ८नहीं है ।
९धर्म १०नहीं है । ११अी अर्थ १२नहीं है । १३
काम १४ नहीं है । १५मोक्ष १६नहीं है । किंतु
१७चिदानंदरूप शिव मैं हूं । शिव मैं हूं ॥ ३ ॥

नं पुण्यं नं पापं नं सौख्यं नं दुःखं

नं मंत्रो नं तीर्थं नं वेदो नं यज्ञाः ॥

अहं भोजनं नैव भोज्यं नं भोक्ता

चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

अर्थः—१पुण्य २नहीं है । ३पाप ४नहीं है । ५
सुख ६नहीं है । ७दुःख ८नहीं है । ९मंत्र १०नहीं
है । ११तीर्थ १२नहीं है । १३वेद १४नहीं हैं । १५

यत् १६ नहीं है । औ १७ मैं भोजन (भोग) नहीं हूँ । भोज्य अरु १८ भोक्ता १९ नहीं हूँ । किंतु २० चिदानंदरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥४॥

नं मे^१ मृत्युशंका नं मे^२ जातिभेदः-

पिता नैव मे^३ नैव माता नं जन्म ॥

नं^४ बंधुने^५ मित्रं^६ गुरुने^७ शिष्य-

धिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥५॥

अर्थः-१ मेरेकूं मृत्युकी शंका २ नहीं है । औ ३ मेरेकूं जातिका भेद ४ नहीं है । औ ५ मेरेकूं ६ पिता नहीं है । ७ माता ८ नहीं है । ९ जन्म १० नहीं है । ११ बंधु १२ नहीं है । १३ मित्र १४ नहीं है । १५ गुरु अरु १६ शिष्य १७ नहीं । किंतु १८ चिदानंदरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥ ९ ॥

अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो

विभुर्व्याप्य सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणि ॥

सदा मे^१ समत्वं न मुक्तिर्न वंध-

धिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥६॥

अर्थः—१ मैं निर्विकल्प निराकाररूप विमुहूँ ।

औ २सर्वठिकाने सर्वइंद्रियनके प्रति ३व्यापिके

वर्तमान हूँ । ४मेरेकुं ५सदा ६समता है । ७मुक्ति

८नहीं है । ९बंध १०नहीं है । किंतु ११चिदानं-

दरूप शिव मैं हूँ । शिव मैं हूँ ॥ ६ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्य-
विरचितं आत्मपट्टकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ ५ ॥



॥ अथ श्रीआत्मचित्तनम् ॥ ६ ॥

॥ अहं ब्रह्मास्मीत्यनुभवं वदति शिष्यः ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

अहमेव परं ब्रह्म वासुदेवाख्यमव्ययम् ।

इति स्वान्निश्चयान्मुक्तो बद्ध एवांन्यथा भवेत् ?

अर्थः—“ मैं ब्रह्म हूँ ” इस अनुभवकृं शिष्य

कहता है—१ “ वासुदेव नामवाला अव्यय

(घटने बधनेसे रहित) २ परब्रह्म ३ मैंही हूँ ” ।

४ इस १ निश्चयते मुक्त ६ होवैगा ७ अन्यथा

८ बद्धही ९ होवैगा ॥ १ ॥

अहमेव परं ब्रह्म न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।

इत्येवं समुपासीत ब्रह्मणो ब्रह्मणि स्थितः २

अर्थः—१ “ मैंही परब्रह्म हूँ २ औ मैं ब्रह्मते

पृथक् ३ नहीं हूँ ” । ४ इसप्रकारसे ५ ब्राह्मण

(ब्रह्म होनेकी इच्छावाला मुमुक्षु) जो है सो

विनोद ४] आत्मचितनम् ॥ ६ ॥

७

ब्रह्मविपै स्थितः हुया ६सम्यक्उपासना करै ॥२॥

अहमेव परं ब्रह्म निश्चितं चित्तं चिर्त्यताम् ।

चिद्रूपत्वादसंगत्वाद्देवाध्यत्वात्प्रयत्नतः ॥३॥

अर्थः—१हे चित्त ! २चिद्रूप होनेतैं औ

असंग होनेतैं औ ३प्रयत्नकरि ४अबाध्य

होनेतैं ५“मैहीं परब्रह्म निश्चित हूं” ऐसे तुज

करि ६चित्तन करनेकूं योग्य है ॥ ३ ॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं चैतन्यं च निरंतरम् ।

तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा कैथं वर्णाश्रमी भवेत् ४

अर्थः—१सर्वउपाधिनतैं रहित चैतन्य औ

निरंतर (भेदरहित) तिस ब्रह्मकूं “मैं हूं” ऐसे

जानिके २वर्णाश्रमी ३कैसे ४होवै ? किसीप्र-

कारसैं बी होवै नही ॥ ४ ॥

अहं ब्रह्मास्मि यो वेदे स सर्वं भवति त्विदम् ।

नाभूत्या ईशते देवास्तस्यात्मैषां भवेद्धि सः ५

अर्थः—१जो २“ मैं ब्रह्म हूँ ” ऐसे ३ जानता है । सो ४तौ यह ५सर्व - (सर्वात्मा) होवै है । ६ताकी ७अभूतिके अर्थ ८देव ९ नहीं १०समर्थ होवै हैं । जातैं ११सो (ज्ञानी) १२इन (देवन)का १३आत्मा १४होवै है ॥५॥

अन्योसावहमन्योस्मीत्युपास्ते योऽन्यदेवताम्
न स वेदे नरो ब्रह्म स देवानां यथा पशुः ६

अर्थः—१“ यह २अन्य है । ३मैं अन्य हूँ ” ऐसै ४जो अन्य (आपतैं भिन्न) देवताकूं ५उपासता है । ६सो ७नर ब्रह्मकूं ८नहीं ९जानता है । १०सो ११जैसै (मनुष्यनका) पशु होवै तैसै १२देवनका (पशु) है ॥ ६ ॥

अहं देवो न चान्योऽस्मि ब्रह्मवाहं न शोकभाक्
संचिदानंदरूपोऽहं निर्विकल्पस्वभाववान् ७

अर्थः—१मैं देव हूँ । २अन्य ३नहीं हूँ ।

ब्रह्मही मैं हूँ । १शोकका भजनेवाला ६ नहीं हूँ । किंतु ७सच्चिदानंदरूप ८निर्विकल्प-स्वभाववाला ९मैं हूँ ॥ ७ ॥

आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरन्ति ये^१ ।
न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्दुष्कृतोत्थानं चापदः८

अर्थः—१जे पुरुष २आत्माकूँ निरंतर ब्रह्म-रूप निश्चय करिके विचरते हैं । ३तिनकूँ ४कि-चित् ५दुष्कृत (पाप) ६नहीं होवै है । ७औ ८दुष्कृततैं उत्पन्न ९आपत्तियां १०नहीं होवै हैं ८ आत्मानं सततं ब्रह्म संभाव्य विहरेत्सुखम् ॥ संसारे गतसारे यस्तैस्य दुःखं न जायते ॥९॥

अर्थः—१जो पुरुष २आत्माकूँ निरंतर ब्रह्मरूप निश्चयकरिके ३सुख जैसें होवै जैसें ४ विचरे । ५ताकूँ ६असार ७संसारविषे ८दुः-ख नहीं होवै है ॥ ९ ॥

क्षेणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिन्म ।
सैर्महापातकं हन्यात्तमः सूर्योदयो यथा ॥ १०

अर्थः—१जो रक्षणमान “मैं ब्रह्म हूँ”
ऐसे ३आत्माके चितनकू ४करै । ५सो ६
सूर्यका उदय जैसे ७अंधकारकू (हनन करै है)
तैसे ८महापातककू हनन करै है ॥ १० ॥

अज्ञानाद्ब्रह्मणो जातमोकाशं बुद्बुदोपमम् ।
आकाशाद्वायुरुत्पन्नो वायोस्तेजस्ततः पयः ।
अंभसः पृथिवी जाता ततो व्रीहियवादिकम् ११

अर्थः—१ब्रह्मके २अज्ञानते ३बुद्बुदकी उप-
मावाला ४आकाश ५उपज्या । ६आकाशते वायु
उपज्या । वायुते तेज । तिसते जल । जलसे पृथ्वी
उपजी । तिसते व्रीहियवादि (अन्न) उपज्या ॥ ११ ॥
पृथिव्यप्सु पयो वर्णा वन्दिर्वार्या नभस्वसा ।
नभोऽप्यव्याकृते तच्च शृद्धे शृद्धोऽसंम्यहं हरिः

अर्थः—१एष्वी जलविषै । जल अग्नि-
विषै । अग्नि वायुविषै । २यद् (वायु) ३
आकाशविषै । ४आकाश बी अव्याकृत (अ-
ज्ञान)विषै । औ सो (अज्ञान) शुद्धविषै क-
ल्पित है । “सो शुद्ध १हरि ६मैं ७हूँ ” ॥१२॥
अहं विष्णुरहं विष्णुरहं विष्णुरहं हरिः ।

कर्तृभोक्तादिकं सर्वं तद्विद्योत्थमेव च १३

अर्थः—१मैं विष्णु हूँ । मैं विष्णु हूँ । मैं
विष्णु हूँ । मैं हरि हूँ २औ ३कर्त्ताभोक्ता-
दिकं सर्वं तिसकी अविनाशै उपजाही है ॥१३॥
अच्युतोऽहमनंतोऽहं गोविंदोऽहमेहं हरिः ।
आनंदोहमशेषोहमजोहममृतोऽस्म्येहम् ॥१४॥

अर्थः—१अच्युत मैं हूँ । अनंत मैं हूँ । गोविंद
मैं हूँ । २हरि ३मैं हूँ । ४आनंदरूप मैं हूँ । अशेष
मैं हूँ । अजन्मा मैं हूँ । अमृतरूप ५मैं हूँ ॥१४॥

नित्योहं निर्विकल्पोहं निराकारोहमव्ययः ।
सच्चिदानंदसंदोहः पररूपोऽस्म्यहं सदा १५

अर्थः—१नित्य मैं हूं । निर्विकल्प मैं हूं ।
निराकार मैं हूं । अव्यय सत् चित् अरु आनंद-
का समूह परब्रह्मरूप २सदा ३मैं ४हूं ॥ १५ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी मुक्तोऽहमिति भावयेत् ।
अशक्तुवन्भावयितुं वाक्यमेतत्सदाभ्यसेत् १६

अर्थः—१" मैं २ब्रह्मही हूं । ३संसारी
४नहीं । ५मैं ६ मुक्त हूं" । ७ऐसे, भावना
करै । ८भावना करनेकूं ९अशक्त हुआ १०इस
११वाक्यका १२सदा अभ्यास करै ॥ १६ ॥

ध्यानयोगेनैकेमासाद्ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।
पञ्चमासाभ्यासयोगेन सर्वं पापं व्यपोहति १७

अर्थः—१एक मासतैं २ध्यानयोग करि

३ब्रह्महत्याकृं दूरी करै है । पद्मासके अभ्या-
सयोगकरि सर्वपापकृं दूरी करै है ॥ १७ ॥

संवत्सरकृताभ्यासात्सिद्धयष्टकमवाप्नुयात् ।

यावज्जीवं सदाभ्यासाज्जीवन्मुक्तो न संशयः

अर्थः—संवत्सरपर्यंत किये अभ्यासतै सिद्धिनके
अष्टककूं पावता है । औ जीवत्पर्यंत सदा अभ्यासतै
जीवन्मुक्त होवै है । यामें संशय नहीं है ॥ १८ ॥

नाहं देहो न च प्राणो न द्रियाणि तथैव च ।

न मनोऽहं न बुद्धिश्चैव चित्तमहंकृतिः १९

अर्थः—१मैं देह २नहीं हूं । ३औ प्राण
४नहीं हूं ५तैसैं ६इंद्रियां ७नहीं हूं । ८औ ९मैं
१०मन ११नहीं हूं । १२औ १३बुद्धि १४नहीं
हूं । औ १५चित्त अरु अहंकार १६नहीं हूं १७
नाहं पृथ्वी न सेलिलं न च बहिस्तथानिलः ।
न चाकाशो न शब्दश्च न च स्पर्शस्तथा रसः ॥

अर्थः—१मैं पृथ्वी २नहीं हूँ । ३जल ४नहीं हूँ । ५औँ अग्नि ६नहीं हूँ । ७तैसैं वायु ८औँ आकाश ९नहीं हूँ । १०औँ ११शब्द १२नहीं हूँ । १३औँ स्पर्श तैसै रस नहीं हूँ ॥ २० ॥

नाहं' गंधो नं रूपं च न मायाहं नं संश्रुतिः ।
सदा साक्षिस्वरूपत्वाच्छिव एवास्मि केवलम् ॥

अर्थः—१मैं गंध २नहीं हूँ । ३औँ ४रूप ५नहीं हूँ । ६मैं ७माया ८नहीं हूँ । ९संश्रुति १०नहीं हूँ । ११सदा साक्षी स्वरूप होनेतैं १२ केवल १३शिवहीं हूँ ॥ २१ ॥

अकर्ताहमभोक्ताहमसंगः परमेश्वरः ।

सदा मत्सन्निधानेन चेषते सर्वमिन्द्रियम् ॥२२

अर्थः—१मैं २अकर्ता हूँ । ३अभोक्ता हूँ । ४मैं ५सदा ६असंग परमेश्वर हूँ । ६मेरे सन्निधानतैं ७सर्वइन्द्रिय ८चेष्टा करैहैं ॥ २२ ॥

आदिमध्यांतमुक्तोऽहं न वेद्धोहं कदाचन ।
स्वभावनिर्मलः शुद्धः स एवाहं न संशयः २३

अर्थः— १में २आदि मध्य अह अंततैं र-
हित हूं । ३में कदाचित् शब्द ५नहीं हूं । जो ६स्व-
भावतैं निर्मल अरु शुद्ध है । सोई मैं हूं । यामि
७संशय ८नहीं है ॥ २३ ॥

सर्वज्ञोऽहमनंतोऽहं सर्वगः सर्वशक्तिमान् ।
आनंदः सत्यबोधोऽहमिति ब्रह्मानुचितनम् २४

अर्थः— “सर्वज्ञ मैं हूं । अनंत मैं हूं । सर्व-
गत सर्वशक्तिमान् आनंदरूप सत्यबोधरूप मैं
हूं” । यह ब्रह्मका अनुचितन है ॥ २४ ॥

अयं प्रपंचो मिथ्यैव सत्यं ब्रह्माहमद्वयम् ।

अत्र प्रमाणं वेदांता गुरवोऽनुभवस्त्वथा २५

अर्थः— १“यह प्रपंच मिथ्याही है । सत्य
२ अद्वय ३ब्रह्म मैं हूं” । ४यामि ५वेदांत (उप-

निपद्) ६अरु ७गुरु तैसै अपना अनुभव प्रमा-
ण है ॥ २५ ॥

मय्येव सकलं जातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।

मयि सर्वं लयं याति तद्ब्रह्माद्वैयमस्म्यहम् २६

अर्थः— १मेरेविपैही सकल उपज्या है । मेरे-
विपै सर्व स्थित है । मेरेविपै सर्व लयकूं पावता
है । सो २अद्वय ३ब्रह्म ४मैं ५हूं ॥ २६ ॥

ब्रह्मैवाहं न संसारी न चाहं ब्रह्मणः पृथक् ।

नाहं देहो न मे देहः केवलोऽहं सनातनः

अर्थः— १मैं २ब्रह्मही हूं । ३संसारी (जीव)
४नहीं हूं । ५बी मैं ब्रह्मते पृथक् ६नहीं हूं ।
७मैं देह ८नहीं हूं । ९मेरा देह १०नहीं है । ११
केवल १२सनातन १३मैं हूं ॥ २७ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमदात्मचि-
त्तनं समाप्तम् ॥ ६ ॥

विनोद ४]

॥ अथ निर्वाणदशकं (सिद्धांत-
विदुः) प्रारम्भः ॥ ७ ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

न भूमिर्न तोयं न तेजो न वायु-

१ न २ ख ३ नद्रियं वी ४ न ५ तेषां समूहः ॥

अनेकांतिकलात्सुपुष्ट्यैकसिद्ध-

स्तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ १ ॥

अर्थः— १भूमि २नहीं है । ३जल ४नहीं
है । ५तेज ६नहीं है । ७वायु ८नहीं है । ९आ-
काश १०नहीं है । ११इंद्रिय १२नहीं है । १३
वा १४तिनका समूह १५नहीं है । इनकुं १६
व्यभिचारी होनेते । १७तार्ते १८सुपुष्टिविपै
सिद्ध १९एक अवशिष्ट २०केवल २१शिव
२२में हूं ॥ १ ॥

नै वर्णा नै वर्णाश्रमाचारधर्मा
 नै मे' धारणाध्यानयोगादयोपि ॥

अनात्माश्रयाहंममाध्यासहानात्
 तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥२॥

अर्थः—१मेरेकू २वर्ण ३नहीं है । औ ४वर्ण
 औ आश्रमके आचार अरु धर्म ५नहीं है । औ
 ६धारणा औ ध्यान योग आदि बी ७नहीं है ।
 ८अनात्मारूप आश्रयवाले अहंममअध्यासकी
 निवृत्तितै ॥ ततै एक अवशिष्ट एकेवल १०
 शिव ११मै हू ॥ २ ॥

नै माता पिता वा न देवा न लोका
 नै वेदा नै यज्ञा नै तीर्थ श्रुवन्ति ॥

सुषुप्तौ निरस्तातिशून्यात्मकत्वात्
 तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥३॥

अर्थः—१माता २वा ३पिता ४नहीं है । ५

विनोद ४] निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ १९

देव ६ नहीं है । ७ लोक ८ नहीं है । ९ वेद १०
नहीं है । ११ यज्ञ १२ नहीं है । १३ तीर्थ १४ नहीं
है । १५ कहते हैं कि सुपुत्रिविषै निरस्त अतिशू-
न्यरूप होनेते ॥ तार्ते एक अवशिष्ट १६ केवल
१७ शिवरूप १८ मैं हूँ ॥ ३ ॥

ने सांख्यं ने शैवं नं तर्त्पांचरात्रम्
ने जैनं नं मीमांसकादेर्मतं वां ॥

^{१३} विशिष्टानुभूत्या विशुद्धात्मकत्वात्
तदेकोवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१सो २सांख्य ३नहीं है । ४शैव ५
नहीं है । ६पांचरात्र ७नहीं है । ८जैन ९नहीं
है । १०वा ११मीमांसक आदिकका मत १२
नहीं है । १३श्रेष्ठ अनुभव करि विशुद्धस्वरूप हो-
नेते ॥ तार्ते एक अवशिष्ट १४केवल १५शिवरूप,
१६मैं हूँ ॥ ४ ॥

ने चोर्ध्वं नै चाधो नै चान्तर्न वाह्यम्
 नै मध्यं नै तिर्यङ् नै पूर्वापरादिक् ॥
 विषेद्व्यापकत्वादखंडैकरूप-

स्तदेकोऽवशिष्टः शिर्वः केवलोऽहं ॥ ५ ॥

अर्थः-१ उर्ध्वं २ नहीं है । ३ औ अध ४ नहीं
 हैं । ५ औ भीतर इनहीं है । ७ बाह्य ८ नहीं है ।
 ९ मध्य १० नहीं है । ११ टेढा १२ नहीं है । १३ पूर्व
 अरु पश्चिम दिशा १४ नहीं है । १५ आकाशकी
 न्याई व्यापक होनेतैं । अखंड एकरूप है । तातैं
 एक अवशिष्ट १६ केवल १७ शिवरूप १८ में हूं ॥५॥

नै शुक्लं नै कृष्णं नै रक्तं नै पीतं

नै कुञ्जं नै पीनं नै ह्रस्वं नै दीर्घम्

अरूपं तथा ज्योतिराकारकत्वात्

तदेकोऽवशिष्टः शिर्वः केवलोऽहम् ॥ ६ ॥

अर्थः-१ शुक्ल २ नहीं हूं । ३ कृष्ण ४ नहीं हूं ।

५रक्त इनहीं हूं । ७पीत <नहीं हूं । ९कुब्ज
 (कूबडा) १०नहीं हूं । ११पीन १२नहीं हूं ।
 १३ह्रस्व १४नहीं हूं । १५दीर्घ १६नहीं हूं ।
 १७तथा १८अरूप हूं । १९ज्योति (प्रकाश)
 रूप आकारवाला होनेतैं ॥ तारैं एक अवशिष्ट २०
 केवलं २१शिवरूप २२में हूं ॥ ६ ॥

नै शास्ता नै शास्त्रं नै शिष्यो नै शिक्षा ।
 नै चै त्वं नै चाहं नै चायं प्रपंचः ॥

स्वरूपावबोधो विकल्पासहिष्णु-

स्तटेकोऽवशिष्टः शिष्यः केवलोऽहम् ॥७॥

अर्थः— १शास्ता २नहीं है । ३शास्त्र ४नहीं
 है । ५शिष्य इनहीं है । ७शिक्षा <नहीं है । ९
 औ तूं १०नहीं है । ११औ मैं १२नहीं हूं ।
 १३औ यह प्रपंच १४नहीं है । जातैं १५स्वरूप-
 भूत अवबोध विकल्पकूं नहीं सहासनेहारा

२२ निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ [वेदांत

हूं । तर्तै एक अवशिष्ट १६केवल १७ शिवरूप
१८में हूं ॥ ७ ॥

नै जाग्रन्नं मे' स्वप्न को वा सुपुति-

०न विश्वो नै' वा तैजसः प्राज्ञको वा ॥

अविद्यात्मकत्वात्रयाणां तुरीय-

स्तदेकोवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ८ ॥

अर्थः- १मेरेकूं २जागृत ३नहीं है । ४स्वप्न
वा सुपुति ५नहीं है । ६विश्व ७नहीं हूं । ८वा
तैजस ९वा १०प्राज्ञ ११नहीं हूं । १२तीनोंकूं
१३अविद्यास्वरूप होनेतै । १४तर्तै १५ तुरी-
यरूप १६एक अवशिष्ट १७केवल १८शिवरूप
१९में हूं ॥ ८ ॥

अपि व्यापकत्वाद्धितस्वभयोगात्

स्वतः सिद्धभावादनन्याश्रयत्वान् ॥

विनोद ४] निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ २३

जगत्तुच्छमेतत्समस्तं तदन्यत्

तदेकोऽवशिष्टः शिवः केवलोऽहम् ॥ ९ ॥

अर्थः— १ व्यापक होनेतै । औ प्रसिद्ध तन्व्य
शब्दकारि उच्चारणतै । औ स्वतःसिद्ध सत्ता
(होनेवाला) होनेतै । औ अन्य आश्रयकारि र-
हित होनेतै २बी । ३तिसतै अन्य ४यह समस्त
५जगत् तुच्छ है । ६ततै एक अवशिष्ट ७केवल
८शिवरूप ९मै हूं ॥ ९ ॥

ने चैकं तदन्यद्वितीयं कुतः स्यात्

ने वा केवलत्वं ने चाकेवलत्वम् ॥

ने शून्यं ने चाशून्यमद्वैतकत्वात्

कथं सर्ववेदांतसिद्धं प्रवीमि ॥ १० ॥

अर्थः— १जब एक २नहीं हैं । ३तब तिसतै
अन्य द्वितीय कदातै होवैगा । ४वा केवलभाव

२४ निर्वाणदशकम् ॥ ७ ॥ [वेदात्

९ नहीं है । ६ औ अकेवलभाव, ७ नहीं है । ८ शून्य ९ नहीं है । १० औ अशून्य ११ नहीं है । १२ अद्वैतरूप होनेतैं । तब ताकू १३ सर्ववेदातो करि १४ कैसैं १५ कहों ॥ १० ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं निर्वाणदशकं (सिद्धांत-विदुः) समाप्तम् ॥ ७ ॥

॥ अथ आत्मपंचकप्रारम्भः ॥ ८ ॥

॥ शालिनी छंदः ॥

नाहं देहो नद्रियाण्यन्तरंगम्

नाहंकारः प्राणवर्गो न बुद्धिः ॥

दासापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः

साक्षी नित्यः मत्तगात्मा शिवोऽहम् ॥१॥

अर्थः—१ मैं देह २ नहीं हूँ । ३ इंद्रियाँ ४ नहीं हूँ । ५ अंतरंग (मन) भी ६ अहंकार अरु प्राणवर्ग ७ नहीं हूँ । ८ बुद्धि ९ नहीं हूँ । किंतु स्री पुष क्षेत्र धन आदिकर्ते दूर । साक्षी नित्य मत्तगात्मा शिवरूप मैं हूँ ॥ १ ॥

रैज्ज्वज्ञानाद्भ्राति रैज्जुर्थथाहिः

ईवात्माज्ञानादात्मनो जीवभावः ॥

आप्तोक्त्या हि भ्रांतिनाशे स रज्जु-

जीवो नाहं दे'शिकोक्त्या शिवोहम् ॥२॥

अर्थः—१जैसे २रज्जुके अज्ञानते ३रज्जु ४
सर्परूप ५भासती है । तैसे ६स्वात्माके अज्ञानते
आत्माकू जीवभाव है । जैसे आप्तवचनकरिही
भ्रांतिके नाश हुये सो (सर्प) रज्जु होवै है । तैसे
७गुरुके वचनकरि तमें ९जीव नहीं । किंतु
१०में ११शिव हूं ॥ २ ॥

आभाती दे' विश्वमात्मन्यसत्यं

सत्यज्ञानानंदरूपे विमोहात् ॥

निद्रामोहात् स्वप्नवत्तत्र सत्यं

शुद्धः पूर्णो नित्य एकः शिवोहम् ॥३॥

अर्थः— १असत्य २यह विश्व । ३सत्य ज्ञान
आनंदरूप ४आत्माविषे ५विमोह (भ्रांति)ते
६भासता है । ७निद्रारूप मोहते स्वप्नकी न्याई सो

विनोद ४] आत्मपंचकम् ॥ ८ ॥

सत्य नहीं है ॥ १० शुद्ध पूर्ण नित्य एक शिव-
रूप में हूँ ॥ ३ ॥

नाहं जातो न प्रैष्टो न नैष्टो

देहस्योक्ताः प्राकृताः सर्वधर्माः ॥

कर्तृत्वादिचिन्मयस्याऽस्ति नाहं-

कारस्यैव सात्मनो मे शिवोऽहम् ॥ ४ ॥

अर्थ:- १ में जन्मकं पाया नहीं हूँ । २ वृद्ध
भया नहीं हूँ । ५ नष्ट भया नहीं हूँ । ७ प्राकृत
सर्वधर्म सदेहके कहे हैं । एकताभाव आदि
चिन्मय १० आत्मरूप मेरेकं ११ नहीं १२ है ।
किंतु १३ अहंकारकूही हैं । १४ में १५ शिवरूप
हूँ ॥ ४ ॥

मत्तो नान्यत्किंचिद्वास्ति दृश्यं
सर्वं वाद्यं वस्तुमायोपकृतम् ॥

आदर्शातिभासमानस्य तुल्यं

मय्यद्वैते भवति तस्माच्छिवोऽहम् ॥ ५ ॥

अर्थः—१इहां २कुछ बी ३दृश्य ४मुजतें ५
अन्य ६नहीं ७है । ८आदर्शके भीतर भासमा-
नके तुल्य ९सर्व बाह्य वस्तु १०अद्वैतरूप ११
मुजविपै १२माया करि कल्पित १३भासता है ।
तातें १४मैं १५शिव हूं ॥ ५ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितमात्मपंचकं
समाप्तम् ॥ ८ ॥



श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल श्री धीशकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीयै. ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ०॥-

॥ उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृंठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगेरु०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।-

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
* ऐसी चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०)-॥
रखी है । श्री कोट्टी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

* १. वेदांतपदावलि (श्रीविचारच. ५ अष्टाभक्तके पद-
द्वोदशका सार) ६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

* २ वेदांतपदार्थसंज्ञा. सहित.

३ मूफीओंके गजल.

* ७ वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-

४ देवाजी भक्तके पद. सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे भ्रमसे
नही परंतु समयसजोग अनुसार प्रकट किये जायेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमस्क ॥ ९ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ ३ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपितांबरजीकृत

भाषादीपिका सहित

सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ खत १९४४-सन् १८८८ ॥

(प्रकटकताने सर्वहक स्वाधीन रखे हैं)

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ धीरांकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीयै. ४

श्रीबालबोध टीकासहित. ०॥=

„ उक्तग्रंथ चित्रित कपड़ेके पृष्ठेसहित. ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदांतपदार्थकोश ॥ आगे ६०४ धे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०१

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अंककी कीमत ०) ॥
रखी है । औ कोड़ी ६ अंकका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

*१. वेदांतपदावलि (श्रीविचारचं. ५ अस्त्राभक्तके पद-
द्रोदयका सार) ६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

*२. वेदांतपदार्थसंज्ञा. सहित.

*३. सूफीओंके गजल. * ७. वेदांतस्तोत्रसंग्रह अर्थ-

*४. देवाजी भक्तके पद. सहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे प्रमत्त
नही परंतु समयमंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पंचमअंक ॥ ५ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ अथ श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९॥

॥ श्रीशंकरउवाच ॥

॥ उपेंद्रवचा छंदः ॥

कैस्त्वं शिशो कस्य कुतोऽसि गता ।

किं नाम ते^० त्वं कुत आगतोऽसि ॥

एतन्मयोक्तं वदं चोर्भकलं

मत्प्रीतये प्रीतिविवर्धनोऽसि ॥ १ ॥

अर्थः—श्रीशंकर उवाचः—१हे बालक ! २तूं
३कौन है । ४किसका है । कहाँतैं ५जानेवाला
६है । ७तेरा क्या नाम है । ८तूं कहाँतैं आया

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत संस्कृतस्तोत्रनकू पाठ किंवा कंठ करते हैं । परंतु
निष्ठाकी आरुद्धतामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तानें परमकारु-
णिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतावरजीने दयाकरिके स्तो-
त्रनकी भाषा करी है । औ संस्कृतमें अल्पअभ्यासवानकू
षी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । ताते मूलमें औ
भाषामें अन्वयअनुसार अंकोंकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस पंचमअंक्रमें जितने स्तोत्र छपे
हैं । सो नीचे लिखे हैं:—

श्रीहस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥

श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥ १० ॥

श्रीस्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ॥ ११ ॥

औ अन्य स्तोत्र वा पृष्ठभक्तविर्य छापे हैं ॥

शरीफ सालेमहंमद.

निर्मितं मैनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।

निर्स्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ॥

रैविलोकं चेष्टानिमित्तं यथा यैः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोर्हमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसे २लोकनकी चेष्टाका निमित्त ३सूर्य है । तैसे ४जो ५मन अरु चक्षु आदिक-की प्रवृत्तिविषे ६निमित्त है । औ ७निरस्त सर्व उपाधिवाला अरु आकाशके तुल्य है । ८सो नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०में हूं ॥ ३ ॥

यै मद्र्युष्णवन्नित्यवोपस्वरूपं ।

भनश्चक्षुरादीन्धैवोधात्मकानि ॥

प्रवृत्तौ औश्चित्यं निष्कंपमेकं ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोर्हमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अधिके उष्णकी न्याई नित्य बोध-स्वरूप २निश्चल एकरूप ३निसको ४आश्रय

२ हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ [वेदांत

हैं। १०हे बाल ! तूं ११इस मेरेकरि उक्तअर्थकूं
१२औ (अनुक्तअर्थकूं बी) १३मेरी प्रीतिके
वास्ते १४कथन कर । १५तूं प्रीतिवर्धक है ॥१॥

॥ हस्तामलकउवाच ॥

॥ भुजंगप्रयातं छंदः ॥

नाहं मनुष्यो नं चै देवयक्षौ ।

नं ब्रह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः ॥

नं ब्रह्मचारी नं गृही वनस्थो ।

भिक्षुर्न चाहं^{११} निजबोधरूपः ॥ २ ॥

अर्थः—हस्तामलक उवाचः—१मैं मनुष्य २न-
हीं हूं। ३औ देव अरु यक्ष इनहीं हूं। ४औ
५ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अरु शूद्र इनहीं हूं। ६ब्र-
ह्मचारी इनहीं हूं। ७गृहस्थ औ वानप्रस्थ १०नहीं
हूं। ११औ १२भिक्षु (सन्यासी) नहीं हूं। किंतु
१३निजबोधरूप १४मैं हूं ॥ २ ॥

विनोद ५] हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ ३

निमित्तं मनश्चक्षुरादि प्रवृत्तौ ।

निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ॥

रेविलोकित्चेष्टानिमित्तं यथा यैः ।

स निसोपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ३ ॥

अर्थः—१जैसे २लोकनकी चेष्टाका निमित्त ३सूर्य है । तैसे ४जो ५मन अरु चक्षु आदिककी प्रवृत्तिविषे ६निमित्त है । औ ७निरस्त सर्व उपाधिवाला अरु आकाशके तुल्य है । ८सो नित्य ज्ञानस्वरूप ९आत्मा १०मैं हूँ ॥ ३ ॥

यं मन्त्र्युष्णवन्नित्यबोधस्वरूपं ।

मनश्चक्षुरादीन्धैवोधात्मकानि ॥

प्रवृत्तौ औश्रित्य निष्कंपमेकं ।

स निसोपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ४ ॥

अर्थः—१अग्निके उष्णकी न्याई नित्य बोधस्वरूप २निश्चल एकरूप ३जिसको ४बाधय

करिके ९अंबोध (जड) स्वरूप ६मन अरु चक्षु
आदिक ७प्रवर्त्त होवै हैं । ८सो नित्य ज्ञान-
स्वरूप ९आत्मा १०मैं हूं ॥ ४ ॥

मनश्चक्षुरादेर्वियुक्तः स्वयं यो ।

मनश्चक्षुरादेर्मनश्चक्षुरादिः ।

मनश्चक्षुरादेरगम्यस्वरूपः ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥५॥

अर्थः—१जो २थाप ३मन अरु चक्षु आदिकर्ते
न्यारा है। औ ४मन अरु चक्षु आदिकका मन अरु च-
क्षुरूपादिक है। औ मन अरु चक्षुआदिकर्ते अगम्य
स्वरूपवाला है। सो नित्य ज्ञानरूप ९आत्मा ६मैं हूं ९
मुझाभासको दर्पणे दृश्यमानो ।

सुरत्वात्पृथक्त्वेन नैवास्ति वेस्तु ॥

चिदाभासको धीपुं जीवोपि तद्वत् ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥ ६ ॥

अर्थः—जैसे १दर्पणविषै दृश्यमान जो २मुखका आभास । सो ३मुखरूप होनेतें एथक्पनेकरि ४वस्तु ५नहीं है । ६तैसे ७बुद्धिविषै ८चिदाभासरूप ९जीव बी है । १०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२में हूं ॥ ६ ॥

यथा दर्पणाभाव आभासहानौ ।

मुखं विद्यते कल्पनाहीनमेकम् ॥

तथा धीवियोगे निर्भासको यः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोहंमात्मा ॥ ७ ॥

अर्थः—१जैसे दर्पणके अभावके भये मुखके आभासकी हानिके हुये २कल्पनाहीन एक ३मुख विद्यमान होवै है । ४तैसे बुद्धि उपाधिके वियोग भये ५जो ६आभासरहित होवै है । ७सो नित्यज्ञानस्वरूप ८आत्मा ९में हूं ॥ ७ ॥

य एको विभोति स्वतः शुद्धचेताः ।

प्रकाशस्वरूपाऽपि नानैव धीर्षु ॥

६ हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ [विदांत

शरांबोदकस्थो यथार्थानुरेकः

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोहंमार्त्मा ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो एक २स्वतः शुद्धचेतन प्रकाश-
स्वरूप हुआ ३बुद्धिनविषै ४नानाकी न्याई ५भा-
सता है । ६जैसे ७एक ८मानु ९झरावके जल-
विषै स्थित हुआ [नानाकी न्याई भासता है ।] तैसे
१०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मैं हूँ ॥८॥

यथा सूर्य एकोऽप्यनेकश्चलासु ।

स्थिरास्वप्सनन्वग्विभाव्यस्वरूपः ॥

चलासु प्रभिन्नासु धीऽप्येक एव ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोहंमार्त्मा ॥ ९ ॥

अर्थः—१जैसे २एक वी ३सूर्य । ४चंचल
अह स्थिररूप नानाजलविषै अहुगतप्रकाशकरि
भासमान स्वरूपवाला हुआ ५अनेकरूप हो-
वै है । ६ऐसे ७एक हुआ । ८चंचल भिन्न भि-
न्न बुद्धिनविषै जो अनेकरूप होवै है । ९सो

विनोद ९] हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ ७.

नित्य ज्ञानस्वरूप १० आत्मा ११ में हूँ ॥ ९ ॥

यथानेकचक्षुः प्रकाशो रविर्न ।

क्रमेण प्रकाशीकरोति प्रकाश्यम् ।

अनेका धियो यस्तथैकप्रबोधः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥१०॥

अर्थः—१जैसे अनेकचक्षुनका प्रकाशक सूर्य है । सो २प्रकाशने योग्य वस्तुकुं ३क्रमसै ४नहीं ५प्रकाश करै है । ६तैसे ७जो ८एक प्रबोध ९अनेकबुद्धिनकुं प्रकाश करै है । १०सो नित्यज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२में हूँ ॥ १० ॥

त्रिवस्वत्प्रभातं यथा रूपमक्षम् ।

प्रगृह्णाति नाभातमेवं विवस्वान् ॥

यदाभातर्माभासयत्यक्षमेकः ।

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहंमात्मा ॥११॥

अर्थः—१जैसे २सूर्यकरि प्रकाशित ३रूपकुं चक्षु ग्रहण करैहै । ४अप्रकाशितकुं ५नहीं ।

८ हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ [वेदांत

६ऐसै ७एकसूर्य जोहै सो ८जिसकरि प्रकाशित
९चक्षुकूं १०प्रकाशता है । ११सो नित्य ज्ञान-
स्वरूप १२आत्मा १३में हूं ॥ ११ ॥

समस्तेषु वस्तुष्वनुस्यूतमेकं ।

समस्तानि वस्तूनि यन्न स्पृशति ॥

वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपं ।

स नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ १२ ॥

अर्थः—समस्तवस्तुनविषै अनुस्यूत एक है ।

औ समस्तवस्तु जिसकूं स्पर्श करते नहीं । औ

आकाशकी न्याई शुद्ध स्वच्छ स्वरूपवाला है ।

सो नित्य ज्ञानस्वरूप आत्मा में हूं ॥ १२ ॥

यन्नच्छन्नदृष्टिर्वनच्छन्नमर्कं ।

यथा भ्रम्यते निष्पन्नं चातिमूढः ॥

तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः

सं नित्योपलब्धिस्वरूपोहमात्मा ॥ १३ ॥

अर्थः—१जैसै २बादलकरि आच्छादितदृष्टि-

विनोद ९] हस्तामलकस्तोत्रम् ॥ ९ ॥ ९

वाला ३अतिमूढ (बालक) ४भेषकरि आच्छादित
सूर्यकं ५निस्तेज इमानता है । ७तैसै ८जो मूढ-
ष्टिवाले पुरुषकं ९बद्धकी न्याई भासता है ।
१०सो नित्य ज्ञानस्वरूप ११आत्मा १२मै हूं १३

उपाधौ यथा भेदता, सन्मणीनां ।

तथा भेदता बुद्धिभेदेषु तेऽपि ॥

येथा चंद्रिकाणां जले चंचलत्वम् ।

तथा १३चंचलत्वं तवापीह विष्णो ॥१४॥

अर्थः—(आचार्यवाक्य) १जैसै श्रेष्ठ २मणीनकी
३उपाधिके होते ४भेदता होवैहै । ५तैसै ६तेरी बी
७बुद्धिके भेदोंविषै ८भेदता होवै है । ९जैसै चंद्र-
माकी कां तिनकी जलविषै चंचलता है । तैसै १०हे
विष्णो (पूर्ण) ! ११तेरी बी [इहां बुद्धिविषै]
१२चंचलता है १४

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीहस्तामलका-
चार्यकृतं स्तोत्रं समाप्तम् ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीकाशीपंचकस्तोत्रम् ॥ १० ॥

॥ उपेंद्रवज्रा छंदः ॥

मनोनिवृत्तिः परमोपशांतिः ।

सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च ॥

ज्ञानप्रवाहा विमलादिगंगा ।

सा कैशिकाहं निजबोधरूपा ॥ १ ॥

अर्थः—जहां १मनकी निवृत्तिरूप जो परम-
उपशांति । सो तीर्थनविषै श्रेष्ठ मणिकर्णिका है ।

औ ज्ञानरूप प्रवाहवाली विमलआदि गंगा है ।

सो २निजबोधरूप ३काशी मैं हूं ॥ १ ॥

येस्यामिदं कल्पितमिद्रजालं ।

चेराचरं भाति मनोविलासम् ॥

संचित्मुग्धिका परमात्मरूपा ।

सा कैशिकाहं निजबोधरूपा ॥ २ ॥

अर्थः—१ जिसविषे यह कल्पित इद्रजालरूप
२ मनका विलास ३ चराचर भासता है । औ जो
४ सच्चिदानन्द एक परमात्मारूप है । सो ५ निज
बोधरूप ईकाशी में हू ॥ २ ॥

कोशेषु पञ्चस्वैधिराजमाना ।

बुद्धिर्भवानी प्रेतिदेहगेहम् ॥

सांख्ये शिवः सर्वगतोऽतरात्मा ।

सा काशिकाहं निजबोधरूपा ॥ ३ ॥

अर्थः—जो १ पञ्च २ कोशोंविषे ३ विराजमान
है । औ जहा ४ देहदेहरूप गृहके प्रति ५ बुद्धि-
रूप भवानी है । औ ६ सर्वगत अतरात्मा
७ सांख्यीरूप शिव है । ८ सो ९ निजबोधरूप
१० काशी में हू ॥ ३ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

काश्यां हि कांशते काशी ।।

काशी सर्वप्रकाशिका

सां काशी विदिता येन

तेन प्राप्ता हि कांशिका ॥ ४ ॥

अर्थः—१प्रसिद्ध २काशीविषै ३चेतनरूप का-
शी ४प्रकाश करै है । औ जो चेतनरूप ५काशी
सर्वकी प्रकाशक है । ६जिसने ७सो काशी जानी
है । ८जिसने ९काशी १०प्राप्त करी है ॥ ४ ॥

॥ स्रग्धरा छंदः ॥

काशीक्षेत्रं शरीर त्रिभुवनजठरे

व्यापिनी ज्ञानगंगा ।

भक्तिः श्रद्धा गयेयं निर्जगुरुचरण-

ध्यानयोगः प्रयागः ॥

त्रिंशेशोऽयं तुरीयः सकलजनमनः

साक्षिभूतोऽतरात्मा ।

१२ देहे सर्वे मदीये यदि वसति पुन-
स्तीर्थमन्यत्किमस्ति ॥ ६ ॥

अर्थः—१शरीररूप २काशीक्षेत्रं है । औ
३त्रिभुवनके जठरविषै व्यापनेवाली ज्ञानरूप मंगा
है । औ ४ यह ५भक्ति अह अकाररूप गया
है । औ ६निज गुरुके चरणोंका ध्यानयोग
प्रयाग है । औ ७सर्वजनोंके मनका साक्षिभूत
अंतर आत्मा ८यह तुरीयरूप ९विश्वेश्वरं है ॥
१०जब ११मेरे १२देहविषै सर्व १३वसता है ।
तब फेर १४अन्य १५तीर्थ १६क्या है ॥ ६ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं श्रीकाशी-

पंचकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ १० ॥

॥ अथ श्रीस्वानुभवादर्शस्तोत्रम् ११

प्रथम सर्वअधिकारीनकूं साधारण ससाधन सफलज्ञानके उपदेशपूर्वक स्वरूपानुसंधान करते हुये स्वानुभवकूं दिखावै है:—

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

कर्मोपास्तिविशुद्धशांतहृदयो

नाऽऽप्ता विवेकादिकं ।

गत्वा ब्रह्महिंदं मशांतममलं

वेदार्थविज्ञं गुरुम् ॥

संशोध्य श्रवणं विधाय चं

मुहुमत्वा निदिध्यासवान् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति मुक्तिवपुषं

'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ १ ॥

अर्थ:—१कर्म अरु उपासना करिके, विशुद्ध अरु शांत (एकाग्र) भया है हृदय जिसका । ऐसा

जो मनुष्य । सो २विवेक आदिक [साधन]कूं
 ३पायके । ४ब्रह्मवेत्ता ज्ञात निर्मल (अनंदित
 आचारवाले) वेदार्थके जाननेवाले गुरुके
 प्रति [विधिपूर्वक] ५शरण जायके । [ताके पास]
 तत्त्वकूं ६शोधन करिके । ७औ [अंगअंगी भेदतें
 द्विविध] ८श्रवणकूं करिके । ९वारंवार मनन-
 करिके निदिध्यासनवान् हुआ पुरुष १०जाकूं
 ११जानिके १२मुक्तिस्वरूप १३परब्रह्मकूं पा-
 वता है । १४सो १५परमात्मा आप १६मैं हूं ॥१॥

अब उत्तमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके
 प्रकारपूर्वक बोधके मार्गकूं कहै हैं:-

नेतीत्यादिजगन्निषेधनपरै-

वेदांतवाक्यैः परै-

शुक्तेत्या चै भेतिपिद्ध्य द्वैतेमखिलं

चाख्याकृतं व्याकृतम् ॥

ध्यात्वा^१काशसु^२पुष्पसन्निभमिदं^३

शेषं^४ च^५ तत्त्वं^६ निर्जं ।

ज्ञात्वा^७ यं^८ परमेति^९ मुक्तिवपुषं

सोऽहं^{१०} परात्मा स्वयम् ॥ २ ॥

अर्थः— १ “नेति नेति” इत्यादिक जगत्के निषेध करनेके परायण २श्रेष्ठ ३उपनिषदनके वाक्यनकरि ४औ ५युक्तिकरि । ६अव्याकृत (कारण)रूप ७औ ८व्याकृत (कार्य)रूप ९संपूर्ण १०द्वैतकूं ११निषेधकरिके (प्रथम परोक्षवाच करिके) । १२औ [तिसविषै एकाग्रताके अर्थ] १३इस (प्रपंच)कूं १४आकाशके पुष्पतुल्य (तुच्छरूप) १५चितन करिके । १६शेषरूप १७जिस १८निज १९तत्त्वकूं २०जानिके २१मुक्तिस्वरूप २२परब्रह्मकूं पावता है । २३सो २४परमात्मा आप २५मैं हूं ॥ २ ॥

अब मध्यमअधिकारीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके मार्ग कहै है -

देहोतर्गतपंचकोशजगतः

कृत्वा पृथग्बुद्धिमान् ।

संगत्या सुविभागहानविधया

तत्त्वपदार्थो परौ ॥

स्मृत्वाऽंसीतिपेदन चैवेर्मनयोः

संबंधसिद्धं हृदा ।

ज्ञात्वा यं^{२७} परमिति मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ३ ॥

अर्थः— १ बुद्धिमान् पुरुष । २ सुसुप्रकारसँ विरोधिभागका त्याग है प्रकार जिसका । ऐसी ३ संगति (शब्दकी लक्षणावृत्तिकरि समष्टिव्यष्टि रूप तीन धदेहनके अतर्गत पंचकोश (अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय) रूप ज-

१८ स्वानुभवाददर्शस्तोत्रम् ॥११॥ - [विदांत

गतत्तै ९पर (लक्ष्य)रूप " तत्त्वमसि " इस
महावाक्यगत ६ " तत् " अरु " त्वं " इन दो
पदोंके अर्थनकूं ७पृथक् (भिन्न) करिके । ९
औ १० " असि " (हो) इस पदकरि ११ इन
(उक्त दोःपदार्थन)के एकताके बोधक तीन-
संबंध (दोपदनके सामानाधिकरण्य दो वाच्या-
र्थनके विशेषण विशेष्यता । दोलक्ष्यनके लक्ष्य-
लक्षकभाव)करि सिद्ध १२ एकताकूं [बोधके
- सहकारी कारण शुद्ध] १३ अंतःकरणकरि १४
स्मरणकरिके । १५ जिसकूं १६ जानिके १७ मुक्ति-
स्वरूप १८ परब्रह्मकूं पावता है । १९ सो
२० परमात्मा आप २१ मैं हूं ॥ ३ ॥

अब मंद (कुतर्कदूषितबुद्धिवाले) अधिका-
रीके अर्थ तत्त्वशोधनके प्रकारपूर्वक बोधके
मार्गकूं कहे हैं:-

चार्वाकादिपरीक्षकैरभिमत-
नात्मत्वयुद्ध्या जटान् ।

कोशान् पंच विविच्य तुच्छमतिना
संवाध्य युक्त्या सुधीः ॥

१ शेषं पुच्छतया मतं स्वहमिति
प्रत्यक्स्वरूपं दृढं ।

ज्ञात्वा १३ यं परमेति १ मुक्तिवपुषं

१ सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ४ ॥

अर्थः— १ तीव्रबुद्धिवाला पुरुष । २ चार्वाक
(देहात्मवादी) आदिक परीक्षक (युक्तिकुशल)-
नकरि ३ अहंभावकी बुद्धिकरि ४ अभिमत ५ ज-
ड ६ पंच अन्नमयादि ७ कोशनकं ८ युक्तिसे ९
विवेचनकरिके (आत्मातै भिन्न जानिके) । “ ये
तुच्छ (असत्) हैं ” ऐसी बुद्धिकरि सम्यक् वा-
धकरिके (परमार्थसत्ताकरि इनके त्रिकालअ-

२० . स्वानुभवाददर्शस्तोत्रम् ॥११॥ [विदांत

भावका निश्चय करिके) । आनंदमयकोशरूप
पक्षीके ब्रह्मरूप १०पुच्छ होनेकरि तैत्तिरीय-
श्रुतिविषै माने हुये ११प्रत्यक् स्वरूप (प्रत्य-
गात्मासै अभिन्न) १२शेषरूप १३निसकूं १४
मैं हूं । ऐसै १५दृढ (संशय औ विपर्ययसै रहित)
जानिके १६मुक्तिस्वरूप १७परब्रह्मकूं पावताहै ।
१८सो १९परमात्मा आप २०मैं हूं ॥ ४ ॥

अब जीवन्मुक्तिके विलक्षणआनंदअर्थ वैराग्य
बोध अरु उपशमके एकत्रस्थितिके प्रकारकूं
कहै है—

स्वांतं वासनया मलीमसमथो
पीनं गुणाभ्यां भृशं ।
“वैराग्येण विवेकजन्मवपुषा
दग्ध्वा हि पूर्वं च ताम् ॥
न्यकृतानु रंजस्तमस्युपरमात्
संपाद्य शुद्धं मृतं ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति मुक्तिवशुपं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ५ ॥

अर्थः— १वासनाकरि मलिन औ २रजोगुण
 अरु तमोगुणकरि अत्यंत ३पीन (स्थूल) भये
 ४मनकूं ५विवेकसैं जन्मयुक्त स्वरूपवाले ६वैरा-
 ग्यकरि ७प्रथम ८ता (वासना) कूं ९दग्ध (क्ष-
 य) करिके १० औ ११जिसकूं १२जानिके १३
 अनंतर १४उपशम (ब्रह्माभ्यासजनित चित्त-
 निरोधरूप समाधिमय राजयोग) तैं १५रजो-
 गुण अरु तमोगुणकूं १६तिरस्कार करिके १७
 शुद्ध (निर्वासनिक) अरु मृत (आविर्भूत सं-
 त्वगुणवाला होनेकरि नष्टस्थूलभाववाला)
 १८संपादनकरिके [जीवत्दशाविणै] १९मु-
 क्तिस्वरूप २०परब्रह्मकूं पावताहै २१सो २२
 परमात्मा आप २३मैं हूं ॥ ५ ॥

अब सप्तज्ञानभूमिकाके कथनपूर्वक उक्त स्थितिकी अवधि औ फलकूं दिखावै हैं:-

जागृत्कत्रितयं तैर्कमपरं

-स्वप्नं सुषुप्तिद्वयं ।

संपाद्यैव तुरीयां सुविमले

पूर्णे च वृत्त्या युते ॥

सांद्रानंदपयोनिधौ सुरमते

ध्यात्वाऽथ जीवन्नपि ।

ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ६ ॥

अर्थ:- १तीनजागृत (शुभेच्छा । सुविचारणा । तनुमानसारूप तीनभूमिका)कूं २संपादनकरिकेहों । ३तैसैं ४जिसकूं ५जानिके ६एक अपर (मसिद्धस्वमतैं विलक्षण) स्वप्न (चतुर्थ भूमिका)कूं [संपादनकरिकेहों तैसैं] ७ध्यान

(समाधि) करिके < दोसुपुत्ति (पंचम, षष्ठ भूमिका) कूं [तैसै] ९तुरीयगा (सप्तमभूमिका) कूं [संपादन करिकेहीं] १०जीवता द्रुया वीपुरुष ११ सुविमल (विशुद्ध) १२औ १३पूर्ण औ स्वरूपाकार १४रुत्तिकरि सहित सघनआनंदके समुद्रविपै सुष्टुप्रकारसै रमता है। १५अनंतर (देहपातके भये) १६विदेहमुक्तिस्वरूप १७परब्रह्मकूं पावता है। १८सो १९परमात्मा आप २०मैं हूं ॥ ६ ॥

अब उक्तस्थितिके साधनभूत अष्टांगसहित निर्विकल्पसमाधिरूप राजयोगकूं सूचन करते हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैं:-

कृत्वा पंचविधान् यमांश्च नियमान्
सिद्धादिकं चासनं ।
प्राणानां नियमं तथैन्द्रियगणं
संयम्य शब्दादितः ॥

ध्यानं धारणया समोध्युगलं
संपाद्य धीरात्मवान् ।

ज्ञात्वा यं परमेति मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ७ ॥

अर्थः— १पांचप्रकारके यमोंकूं औ नियमों-
कूं २औ ३सिद्धआदिक ४आसनकूं औ ५प्रा-
णोंके निरोधकूं ६करिके ७तैसैं इंद्रियनके गणकूं
८शब्द आदिकतैं ९रोधिके । तैसैं १०धारणाकरि
११ध्यानकूं [तैसैं सविकल्प अरु निर्विकल्प भेदतैं]
१२दोसमाधिकूं संपादन करिके । धीरचित्तवाला
हुया पुरुष १३जिसकूं १४जानिके (साक्षात् क-
रिके) उभय १५मुक्तिस्वरूप १६परब्रह्मकूं पाव-
ताहै । १७सो १८परमात्मा आप १९मैं हूं ॥७॥

अब उक्त अष्टांगसहित योगविषै असमर्थ-
ज्ञानीकूं उक्तफलकी प्राप्तिअर्थ विचाररूप सुगम-
उपायकूं कहै हैंः—

मिथ्यात्वं मनसा स्मरंस्त्रिजगतो
 देहादिभानं त्यजन्-।
 वप्सोपाधिकृतां भिदां विघटयन्
 कुर्वन् मनो निर्मलम् ॥
 ब्रह्मास्मीति विभावयन्ननुदिनं
 स्वानंदमास्वादयन् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवपुषं
 'सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ८ ॥

अर्थः- १ जिस (प्रत्यक् अभिन्न परमात्मा)
 २ जानिके [स्थूलसूक्ष्मकारणभेदके] ३ त्रि-
 विधप्रपंचके निश्चित ४ मिथ्यापनैकं मनसे स्म-
 रण करता हुआ । ५ देहादिकके मानकं त्यागता
 हुआ । ६ देहरूप उपाधिके किये-भेदकं नाश
 करता हुआ । ७ मनकं निर्मल (अचंचल) ७ क-
 रता हुआ । ८ निरंतर ९ " मैं ब्रह्म हूं " ऐसे भावना
 करता हुआ । १० स्वरूपानंदकं आस्वादन करता
 हुआ । उभय ११ मुक्तिस्वरूप १२ परब्रह्मकं पा-

वताहै । १३सो १४परमात्मा आप-१५में हूँ ॥८॥

अब उक्तविचारआदिक साधनोंविषे असमर्थ मंदबुद्धिवाले पुरुषनके अर्थ ज्ञानके नानासाधन ज्ञान अह मोक्षकूँ कहते हुये स्वस्वरूपका अनुसंधान करै हैं:-

ईशस्य स्मरणं द्विधा ह्यनुदिनं
तन्नामसंकीर्तनं ।

वा गंगारूपनं सुकृत्य पठनं
गीतोऽस्मृतेः प्रत्यहम् ॥

संतसंसद्रूपनं स्वैकर्म यजनं
दानं सुदत्त्वा शुचिर् ।

ज्ञात्वा 'यं परमेति' मुक्तिवपुषं

सोऽहं परात्मा स्वयम् ॥ ९ ॥

अर्थ:- १निरंतर २ईश्वरके सगुण निर्गुण भेदके ३द्विविध ४स्मरण (चितनरूप उपासन) कूँ । ५वा. ६निरंतर ता (ईश्वर)के नामके सम्यक् (चित्तकी एकाग्रतापूर्वक) कीर्तनकूँ ।

वा ७ गंगास्नानकूं । वा ८ प्रतिदिन ९ गीतास्मृतिके
 १० पाठकूं । वा प्रतिदिन ११ संतोकी समाविषै
 गमनकूं । वा १२ स्वकर्म (अपने घर्णाश्रमके धर्म)
 कूं । वा प्रतिदिन १३ यजन (भगवत्पूजन) कूं
 १४ सुष्टुप्रकारसे करिके । वा १५ दानकूं [सुष्टु
 प्रकारसे श्रद्धापूर्वक सत्पात्रके अर्थ] देके । पवित्र
 हुआ पुरुष १६ जिसकूं १७ जानिके १८ मुक्ति-
 स्वरूप १९ परब्रह्मकूं पावता है । २० सो २१ पर-
 पात्मा आप २२ में हूं ॥ ९ ॥

अब “ स्वानुभवाददर्श ” शब्दके अर्थसहित
 ताके प्रयोजनकूं कहै हैं:-

येनास्मिन्विमले सुवाक्यनिकरा-
 दर्शे विवेकान्विते ।

सेवास्नेहसुदीप्तदेशिकवचो-
 दीपप्रभोद्भासिते ॥

शुद्धस्वांतदृशा हि पश्यति जनः
 स्वात्मानमेवाद्वयं ।

२८ स्वानुभवाददर्शस्तोत्रम् ॥ ११ ॥

तेन स्वानुभवाय वाय दैयया-

ऽऽदर्शोऽर्थमादर्शितः ॥ १० ॥

अर्थः— १ जिस कारणकरि २ विमल (नि-
दोष) औ ३ विवेककरि युक्त औ सेवारूप
तैलकरि प्रदीप्त जो गुरुके वचनरूप दीपककी
प्रभा । तिसकरि प्रकाशित ४ इस ५ श्रेष्ठवाक्योंके
समूहरूप दर्पणविपै ६ अधिकारी जन ७ शुद्ध
अंतःकरणरूप चक्षुकरिहीं ८ अद्वय (ब्रह्मसँ अ-
भिन्न) ९ स्वात्माकुंही १० देखताहै (अपरोक्ष
जानताहै) । ११ तिस कारणकरि १२ शुभ १३
स्वानुभवके अर्थ १४ यह १५ आदर्श है । तो मुमु-
क्षुनके ऊपर १६ दयाकरि १७ दिखाया ॥ १० ॥

इति श्रीमद्भाषुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य
पीताम्बरान्हविदुषा विरचितः स्वानुभवादर्शः
समाप्तः ॥ ११ ॥

शरीफ सालेमहमद (काठियावाड) बेरावल.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहाँसे मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्पुपेएषलका टाफकमो-शन पड़ेगा ॥ यह सर्वप्रथम सारे हिंदुस्थानमें जहां जहां पुस्तक बेचनेवाले है । उनहीं से भी मिल सकते हैं ॥

श्री विचारसागर ५५४ द्विपणसहित औ श्रुति-

रत्नावलि तथा चड़ी अकारादि अनुक्रमणिका-

सहित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृत्ति- २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... .. १॥।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०॥।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(मोटेरी ग्रंथ रहे है) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०॥।

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलभाषा.... .. ०॥।

श्रीईशाद्यष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशंकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीय, ४

श्रीबालबोध टीकासहित, ०॥=

„ उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूठेसहित, ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदातपदार्थकोश ॥ आगेद०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०।

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसी चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अककी कीमत ०) ॥
रखी है । औ कोइसी ६ अरुका मात्र रु. ०॥ पड़ेगा ॥

*१ वेदातपदावलि (श्रीविचारच, ५ अखाभक्तके पद-

श्लोकका सार)

६ प्रास्ताविकश्लोक अर्थ-

*२ वेदातपदार्थमञ्जा.

सहित.

३ सूफीओंके गजल.

* ७ वेदातस्तोत्रसमूह अर्थ-

४ देवाजी भक्तके पद.

सहित. अक ३-४-५-६

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे प्रमसे
नही परंतु समयसजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

षष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रह ॥ ४ ॥

ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत
भाषादीपिकासहित

सर्वसुसुकुके हितार्थ

शरीफ सालेमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सपत् १९४५-सन् १८८९ ॥

(प्रकटनार्थे सर्वद्वय स्वाधीन रहे है)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद वंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १

बहुत मुमुक्षुजन श्रीमच्छंकराचार्यकृत औ अन्यमहा-
त्माकृत सस्कृतस्तोत्रनक पाठ किंवा कठ करते हैं । परंतु
निष्ठाही आरुढ़तामें उपयोगी तिन स्तोत्रनके अर्थ निश्चय
करनेमें पराधीनताकू अनुभव करते हैं । तातैं परमशरु-
णिक ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजनें दयाकरिके
स्तोत्रनकी भाषा करी है । औ सस्कृतमें अल्पअभ्यास-
वानकू षी प्रत्येकशब्दके अर्थका बोध होवै । तातैं मूलमें
औ भाषामें अन्वयअनुसार अर्थकू रखे हैं ॥

श्रीवेदांतविनोदके इस पृष्ठअङ्कमें जितने स्तोत्र छपे
है सो नीचे लिखे हैं —

श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥ १२ ॥

श्रीपरापूजा ॥ १३ ॥

श्रीमनीषापचकस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

घटनसाहेबके गजेंद्र ॥ २ ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

पष्ठअंक ॥ ६ ॥

॥ श्रीवेदांतस्तोत्रसंग्रहप्रारंभः ॥ ४ ॥

॥ अथ श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् १२

॥ शार्दूलविक्रीडितं छंदः ॥

विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरी-

तुल्यं निजांतर्गतं ।

पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिबो-

द्धृतं यथा निद्रया ॥

यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये

स्वात्मानमेवाद्वयम् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं

श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ १ ॥

अर्थः—१ दर्पणविषे दृश्यमान नगरीके तुल्य

२ दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ [विदांत

निजांतरगत २विश्वकूं ३जैसैं निद्राकरि (देखिये
है ।) तैसैं ४मायाकरि बाहिर ५उड्डूतकी ६न्या-
ई ७आत्माविपै देखताहुया । ९जो १०प्र-
बोधके समयमें ११अद्वयरूप १२ स्वात्माकूं-
ही १३साक्षात् (अपरोक्ष) करता है । १४तिस
श्रीगुरुकी मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके तांई
१६यह १७नमस्कार होहु ॥ १ ॥

बीजस्यांतरिवांकुरो जैगदिदं
ग्राह् निर्विकल्पं पुन-
र्मायाकल्पितदेशकालकलना-
वैचित्र्यचित्रीकृतम् ॥

मायावीय विजृंभयत्यपि महा-
योगीव यंः स्वैच्छया ।
तैस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम १इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ २ ॥

अर्थः—१बीजके भीतर २अंकुरकी ३न्याई ४यह ५ जगत् ६पूर्व निर्विकल्प था । फिर मा-
याकरि कल्पितदेशकालकी कल्पनाके विचि-
त्रताकरि चित्रकी न्याई किया है ॥ ७जो ८मा-
यावीकी न्याई औ ९महायोगीकी न्याई १०
स्वइच्छाकरि ११विजृम्भण (विलास)कू करता-
वी है । १२तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई १४यह १५नमस्कार होहु ॥ २ ॥

यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्
कल्पार्थमं भासते ।

साक्षात्तन्वमसीति वेदवचसा
यो बोधयसोऽश्रितान् ॥

यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरा-
वृत्तिर्भवांभोनिधौ ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः १३
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ३ ॥

अर्थः—१जाहिका स्फुरण सत्स्वरूप हुआ
 असत्के तुल्य अर्थोविषै अनुस्यूत भासता है ।
 औ २जो ३“तत्त्वमसि” इस वेदके वचनकरि
 ४आश्रितन (शरणागतन)कूं ५साक्षात् ईबोधन
 करै है । औ ७जिसके साक्षात्कारतै ८संसार-
 सागरविषै ९पुनरावृत्ति (पुनर्जन्म) १०होवै न-
 हीं । ११तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप १२श्रीदक्षिणा-
 मूर्तिके ताई १३यह १४नमस्कार होहु ॥ ३ ॥

नानाछिद्रघटोदरस्थितमहा-
 दीपप्रभाभास्वरं ।

ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरण-
 द्वारा बहिः स्पंदते ॥

जानामीति तमेव भांतर्मनुभा-
 त्येतैत्समस्तं जगत् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम ईदं
 श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ४ ॥

विनोद ६] दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ ५

अर्थः—१ नानाछिद्रवाले घटके उदरविषै स्थित बड़ेदीपके प्रभाकी न्याई । प्रकाशवाला २ जाका ३ ज्ञान ४ तो चक्षुआदिकरणद्वारा बा- हिर स्फुरता है । “मैं जानता हूँ” ऐसे तिसीही- के भासमान होते ५ यह समस्तजगत् इपीठे भासता है । ७ तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८ श्रीदक्षिणा- मूर्तिके ताई ९ यह १० नमस्कार होहु ॥ ४ ॥

देहं प्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां

बुद्धिं च शून्यं विदुः ।

स्त्रीवालांधजडोपमास्त्वं ह्यमिति

भ्रान्तौ भ्रेशं वादिनः ॥

मायाशक्तिविलासकल्पितमहा-

व्यामोहसंहारिणे ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं

श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ५ ॥

अर्थः— १ स्त्री बाल अंध अरु जडकी उपमावा-
ले २ अतिशयवादी ३ भ्रान्त पुरुष ४ तौ ५ देह-
कूँ औ प्राणकूँ बी औ इंद्रियनकूँ बी औ चंचल-
बुद्धिकूँ औ शून्यकूँ ६ “मैं हूँ” ऐसैं ७ जानते
हैं । ८ तिस ९ मायाशक्तिके विलास (कार्य) रूप
कल्पित महाव्यामोहके संहार करनेहारे १०
श्रीगुरुमूर्तिरूप ११ श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई १२ यह
नमस्कार होहु ॥ १ ॥

रौद्रुग्रस्तदिवाकरेन्दुसदृशो
मायासमाच्छादनात् ।
सन्मात्रः करणोपसंहरणतो
योऽभूत्सुपुसः पुमान् ॥
मौगस्वाप्सामिति प्रबोधसमये
यः प्रत्यभिज्ञायते ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम ईदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ६ ॥

अर्थः— १माया करि सम्यक् द्वापनेतै । २रा-
हकरि ग्रस्त सूर्य औ चद्रके तुल्य ३सत्मान-
रूप धनो ५पुरुष । ६करणोंके उपसहार (विलय)
तै ७सुपुत्र ८होवैहै । औ ९जो १०बोव (जाग्र-
त) के समयविषै ११“में पूर्व सोयाथा” ऐसै
१२प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्षका विषय करिये है । तिस
श्रीगुरुमूर्तिरूप १३श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई १४यह
१५नमस्कार होहु ॥ ६ ॥

वाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा
सर्वास्ववस्थास्वपि
न्याष्टत्तार्स्वनुवर्तमानमहमि-
त्यंतःस्फुरतं सदा ॥
स्वात्मानं भेकटी करोति भजता
यो भद्रया मुद्रया ।
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम ईद
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ७ ॥

८ दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ [वेदांत

अर्थः—१बाल्यआदिकनविषै बी । २तैसैं
३जागृत्आदिक ध्व्याद्यत (परस्परभिन्न) ५सर्व
अवस्थाकेविषै बी ६अनुवर्तमान । औ “मै
हूं” ऐसैं भीतर ७सदा ८स्फुरनेवाले ९स्वात्माकूं
१०जो ११भजन करनेवालेके मध्य १२मद्रा-
मुद्राकरि १३प्रकट करै है । १४तिस श्रीगुरु-
मूर्तिरूप १५श्रीदक्षिणामूर्तिके ताई १६यह
१७नमस्कार होहु ॥ ७ ॥

विश्वं पश्यति कार्यकारणतया
स्वस्वामिसंबंधतः ।

शिष्याचार्यतया तथैव पितृपु-
त्राद्यात्मना भेदतः ॥

स्वप्ने जाग्रति वा य एष पुरुषो
मायापरिभ्रामितम् ।

तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो यह पुरुष मायाकरि चारिऔर-
तैं भ्रमकूं प्राप्त हुया । २स्वमविषै ३वा ४जाग्र-
त्वविषे ५कार्यकारणभावकरि । औ स्वस्वामी-
संबंधतैं औ शिष्यभाचार्यभावकरि । तैसैंही
पितापुत्रआदि स्वरूपकरि भेदतैं ६विश्वकूं दे-
खता है । ७तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ८श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई ९यह १०नमस्कार होहु ॥ ८ ॥

भूरंभास्यनलोऽनिलोऽवरमह-
नाथो हिमांशुः पुमा-
नित्यैभाति चैराचरात्मकमिदं
यस्यैव मूर्त्यष्टकम् ॥
नान्यत् किंचन विद्यंते विमृशतां
यस्मात्परस्माद्विभो-

१० दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ॥१२॥ [वेदांत

स्तंस्मै श्रीगुरुमूर्तये नमः ईदं
श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ९ ॥

अर्थः—१ पृथ्वी जल तेज वायु आकाश सूर्य
चंद्र औ पुरुष । ऐसै २ चराचरस्वरूप यह जि-
सीहीकी मूर्तिका अष्टक ३ भासता है । औ
४ विचार करनेवाले पुरुषनकूं जिस ५ विभुरूप
६ परमात्मातै ७ अन्य कछु बी ८ नहीं ९ विद्यमान
है । १० तिस श्रीगुरुमूर्तिरूप ११ श्रीदक्षिणा-
मूर्तिके ताई १२ यह १३ नमस्कार होहु ॥ ९ ॥

सर्वात्मत्वमिति स्फुंटीकृतमिदं
येस्मादमुष्मिस्तवे ।

तेनास्य श्रवणात्तथार्थमनना-
द्ध्यानाच्च संकीर्तनात् ॥

सर्वात्मत्वमहाविभूतिसहितं
स्थादीभ्वरत्यं स्वतः ।

सिध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं
चैश्वर्यमव्याहतम् ॥ १० ॥

अर्थः—१जाते इम स्तोत्रविषे ररेसे ३यह ४
सर्वात्मभाव ५स्पष्ट क्रिया है । ६तिस हेतुकरि
याके श्रवणते तथा अर्थके मननते औ ध्यानते
औ संकीर्तनते । सर्वआत्मभावरूप महावि-
भूतिकरि सहित ७ईश्वरभाव स्वतःसिद्ध होवै
है । सो फेर अष्टप्रकारसे परिणामकुं पाया
हुया ८अव्याहत (अभंग) ऐश्वर्य १०होवै
है ॥ १० ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहितं श्रीमच्छंकराचा-
र्यविरचितं दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं समाप्तम् ॥१२॥

॥ अथ श्रीपरापूजा प्रारंभः ॥१३॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चोसनम् ।
स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः ॥१॥

अर्थ—१पूर्णका आवाहन कहां होवैगा । २औ
३सर्वाधारका ४आसन कहां होवैगा । औ स्व-
च्छका पाद्य. ५अर्घ्य औ ७शुद्धकूं आ-
चमन कहांतैं होवैगा ॥ १ ॥

निर्मलस्य कुतः स्नानं वैश्वं विश्वोदरस्य च ।
निरालंबस्योपवीतं पुष्पं निर्वासनस्य च ॥२॥

अर्थः—१निर्मलकूं २स्नान ३कहांतैं होवैगा ।
४औ ५विश्वोदरकूं ६वस्त्र अर्घ्य ७निरालंबकूं
उपवीत (जनोई) ८अर्घ्य ९निर्वासनकूं १०पुष्प
कहांतैं होवैगा ॥ २ ॥

निर्लेपस्य कुंतो मंधो^३ रम्यस्याभरणं कुतः ।

नित्यतृप्तस्य नैवेद्यं तांचूलं च कुंतो विभोः ॥३॥

अर्थः—१ निर्लेपकूं २ गंध ३ कहांतें होवैगा ।
औ ४ रम्य (रमणीय) कूं आभरण कहांतें हो-
वैगा । औ नित्यतृप्त ६ विभुक् ६ नैवेद्य ७ अह
८ तांचूल ९ कहांतें होवैगा ॥ ३ ॥

प्रदक्षिणा ह्यनंतस्य हृदयस्य कुंतो नतिः ।

वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतः स्तोत्रं^५ विधीयते ॥४॥

अर्थः—१ प्रसिद्धधनंतकी २ प्रदक्षिणा औ
३ प्रसिद्धअद्वितीयकूं ४ नति ५ कैंतें होवैगी । औ
६ वेदवाक्योंकरि अवेद्यका ७ स्तोत्र ८ कहां ९ वि-
धान करियेहै ॥ ४ ॥

स्वयं प्रकाशमानस्य कुंतो नीराजनं विभोः ।

अंतर्वहिश्च पूर्णस्य केंथमुद्रासनं भवेत् ॥ ५ ॥

अर्थः—१स्वयंप्रकाशमान २विभुका ३नीराजन
(आरातिक) ४कहांतैं होवैगा । औ ५भीतर
अरु बाहिर पूर्णका ईउद्वासन (विसर्जन) ७कैसैं
होवै ॥ ५ ॥

एवमेव परापूजा सर्वावस्थासु सर्वदा ।

एकबुद्ध्या तु देवेशे विधेया ब्रह्मवित्तमैः॥६॥

अर्थः—१इसप्रकारसैंहीं परापूजा सर्वअव-
स्थाओंविषै सर्वदा एकबुद्धिसै ती देवेशविषै
२ब्रह्मवित्तमोंकरि ३कर्तव्य है ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीभाषाटीकासहिता परापूजा

समाप्ता ॥ १३ ॥

अथ श्रीमनीपापंचकस्तोत्रम् ॥ १४ ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

सैलाचार्यस्य गमने

कदाचिन्मुक्तिदायकम् ।

काशीक्षेत्रं प्रति सह

गौर्या मार्गे तु शंकरम् ॥ १ ॥

अंत्यवेपथरं दृष्ट्वा

गच्छगच्छेति चाब्रवीत् ।

शंकरः सोऽपि चांडालस्-

तं पुनः माह शंकरम् ॥ २ ॥

अर्थः—१कदाचित् मुक्तिदायक काशीक्षेत्रके प्रति २श्रीशंकराचार्य गमन ३करते थे । तहां ४मार्गविषे तो ५गौरी ६सहित ७चांडाल-वेपथारी<शंकरकूं ९देखिके । १०श्रीशंकरा-चार्यस्वामी ११“गच्छ गच्छ (रस्ता छोड)” ऐसै कहते भये ॥ १२सो १३चांडाल १४वी १५तिस १६ श्रीशंकराचार्यकूं १७फेर कहता भयाः—॥१-२॥

॥ आर्यावृत्त ॥

अन्नमयादन्नमय-

मथवा चैतन्यमेव चैतन्यात् ।

द्विजवर दूरीकर्तुं

वाञ्छसि किं ब्रूहि गच्छ गच्छेति ॥३॥

अर्थः—१हे द्विजवर (कर्मजड) ! २क्या
३“गच्छ गच्छ” ऐसै [कहनेकरि] ४अन्नमयतै
अन्नमयकू अथवा ५चैतन्यतै ६चैतन्यकूही ७दूरि
करनेकू इच्छताहै ? सो ८कथन कर ॥ ३ ॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं छन्दः ॥

किं गंगांबुनि विवितेऽवरमणौ

चांडालवाटीपयः ।

पूरे वांतरमस्ति कांचनघटी

मृत्कुंभयोर्वाविरे ॥

मैत्र्यग्वस्तुनि निस्तरंगसहजा-

नंदावबोधाम्बुधौ ।

विप्रोऽयं श्वपचोऽयमिष्यपि महान्
 कोऽयं विभेदभ्रमः ॥ ४ ॥

अर्थः—१क्या गंगाजलविषै २वा ३चांडाल-
 नके गळीके जलके पूरुमै ४ प्रतिविषित सूर्यविषै
 ५वा ६सुवर्णके घट औ मृत्तिकाके घटमें ७आ-
 काशविषै ८भेद है ! (कितु नहीं है) ॥ एनिस्तरंग
 सहजआनंद अरु ज्ञानके समुद्ररूप १०प्रत्यगात्म-
 वस्तुविषै ११“यह १२विप्र है १३यह १४चां-
 डाल है” । १५ऐसा बी १६कौन यह १७बडा
 १८भेदभ्रम [तुजकुं भया] है ! ॥ ४ ॥

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु स्फुटतरा

यां संविदुज्जृम्भते ।

या ब्रह्मादिपीपीलिकांततनुषु

प्रोता जैगत्साक्षिणी ॥

सैवाहं न च दृश्यवस्तिवन्ति दृढ-

प्रज्ञापि यस्यास्ति 'चेच्

चांडौलोऽस्तु सं तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
 शेषा मनीषा मये ॥ ५ ॥

अर्थः—तहां श्रीशंकराचार्यस्वामी कहै हैंः—१जो संवित् (चित्ति) रजागृतस्वप्न अरु सुषुप्तिविषै अत्यंतस्पष्ट रविलसती है । औ ४जगत्की साक्षी-रूप ५जो (संवित्) ब्रह्मासि आदिलेकै चीटि-पर्यंत शरीरनविषै ओतप्रोत है । ६“सोई मैं हूं ७औ दृश्यवस्तु ँनहीं है” । ९ऐसी दृढबुद्धि बी १०जब ११जाकूं है । १२सो तो १३चांडाल हो वा १४द्विज हो । परंतु सर्वका गुरु है । ऐसी यह १५मेरी १६बुद्धि (निश्चयरूपवृत्ति) है ॥५॥

ब्रह्मैवाहमिदं जगच्च सकलं

चिन्मात्रविस्तारितम् ।

सर्वं चैतदविद्यया त्रिगुणया

क्षीपं मया कल्पितम् ॥

इत्थं यस्य दृढा मतिः सुखतरे

निसे 'परे' निर्मले ।

चांडालोऽस्तु सं तु द्विजोऽस्तु गुरुरि-
त्येपा मनीषा मम ॥ ६ ॥

अर्थः—१मैं २औ सकल चिन्मात्ररूप विस्तारित यह जगत् ध्वजही है । ९औ इसर्व असंपूर्ण यह ९त्रिगुणरूप १०अविद्यासैं ११मुजकरि कल्पित है । ऐसी जाकी दृढमति अत्यंतसुखरूप नित्य १२निर्मल १३परब्रह्मविषै है । १४साँ तो १५चांडाल हो वा १६द्विज हो । परंतु गुरु है । ऐसी यह १७मेरी १८बुद्धि है ॥६॥

शैश्वन्नश्वरमेव विश्वमखिलं

निश्चित्यै वाचा गुरो-

निःसं ब्रह्मं निरंतरं विमृशता

निर्व्याजशांतात्मना ॥

भूतं भौवि चै दुष्कृतं प्रदेहता

सर्विन्मये पावके ।

२० मनीषापंचकस्तोत्रम् ॥१४॥ [वेदांत

प्रारब्धाय समर्पितं स्ववपुरि-

त्येषा मनीषा मेम ॥ ७ ॥

अर्थः—१संपूर्ण २विश्वकू ३निरंतर नश्वरही है । ऐसैं ४गुरुके ५वचनतैं ६निश्चय करिके ७नित्य ८निरंतर ९ब्रह्मकू १०निष्कपट शांत-चित्तकरि ११विचारवाले । १२भूत १३औ १४भावी १५षापकू १६संवित् (ज्ञान)मय अग्निविषै १७दहन करनेवाले जिसने १८अपना शरीर १९प्रारब्धके अर्थ समर्पण किया है । सो गुरु है २०ऐसी यह २१मेरी २२बुद्धि है ॥ ७ ॥

या तिर्यङ्मरदेवताभिरहमि-

त्यन्तः स्फुटा गृह्यते ।

यद्भासा हृदयाक्षदेहविषया

भांति स्वतोऽचेतनाः ॥

तां भास्यैः पिहितार्कमंडलनिभां

स्फूर्तिं सदा भावयन् ।

योगी निर्वृतमानसो हि गुंहरि-
त्येपा मनीषा मम ॥ ८ ॥

अर्थः—१जो (स्फूर्ति) तिर्यक् नर औ देवता
बोंकरि "मैं हूँ" ऐसैं अंतःकरणविषै स्पष्ट ग्रहण-
करिये है । औ जिसके प्रकाशकरि २स्वतः अचे-
तनरूप ३अंतःकरण इंद्रिय देह औ विषय भा-
सते है । ४तिस भास्य (प्रकाश्य बादलन)
करि ढापेसूर्यमंडलके तुल्य स्फूर्तिकू सदा भावना
करताहुया योगी (ज्ञानी) ५जातैं ६आनंदित-
मनवाला होवे है । तातैं ७गुरु है । ऐसी यह
८मेरी बुद्धि है ॥ ८ ॥

यत्सौख्यांबुधिलेशलेशत इमे
शक्रादयो निर्वृता ।

यैश्चित्ते नितरां प्रशांतकलने
लब्ध्वा मुनिर्निर्वृतः ॥

यस्मिन्नित्यसुखांबुधौ गलितधी-

ब्रह्मैव न ब्रह्मविद्यः ।

कश्चित्स सुरेन्द्रवंदितपदो

नूनं मनीषा मर्म ॥ ९ ॥

अर्थः—१जिस आनंदसमुद्रके लेशतैं ये इं-
द्रादिक आनंदित हैं । औ २मुनि जो है सो
३निरंतर प्रशांतकल्पनावाले ४चित्तविषै ५जि-
सकूं ६पायके ७आनंदित होवैहै । औ ८नित्य-
सुखके समुद्ररूप ९जिसविषै १०गलितबुद्धि-
वाला पुरुष ब्रह्मही है ११ब्रह्मवित् १२नहीं ।
ऐसा जो १३ कोईबी है सो सुरेन्द्रकरि वंदित-
पदवाला निश्चयकरि गुरु है । ऐसी १४मेरी
१५बुद्धि है ॥ ९ ॥

॥ इति भाषाटीकासहितं मनीपापंचक-
स्तोत्रम् समाप्तम् ॥ १४ ॥

दीवाने बतनाँमेंसे
॥ गर्जल ॥ १ ॥

(“गइ एक् ब एक् जो हवा पलट्” की राह)

सुदाइ कहता है जिस्कु आलम्
सो ये भि है एक खियाल मेरा ।

बदलना सूरत् हजोर बवसे
हरेक दम्में है हाल मेरा ॥ १ ॥

अर्थः—जिसकू लोक ईश्वर कहते हैं सो मात्र मेरी कल्पनाही है औ हजारप्रकारसे जो प्राणियोंकी आकृतीका पलटना है । सो तिनोके प्रत्येक श्वासमें मेरी स्थितिकू बोधन करे है ॥१॥

कहीं सजन्जल् कहीं हूँ सूरत्
कहीं हूँ दीद और कहीं हूँ हैरत् ।

नजेर हुई है नसीब जिन्कु
वो देखते हैं जमाल मेरा ॥ २ ॥

अर्थः—कहूं आभास तो कहूं विवरूप हूं ।
 कहूं दर्शन तो कहूं दृश्यरूप हूं । परंतु जिनोकूं
 गुरुकृपासे ज्ञानचक्षु प्राप्त भई है सो मेरे स्वरूपकूं
 देखते हैं ॥ २ ॥

कहीं हूँ सूरज कहीं हूँ जैरा

कहीं हूँ दरिया कहीं हूँ कतरा ।

वफाँरे कसरत्से अपने मुजकु

हुवा है मिलना महाल मेरा ॥ ३ ॥

अर्थः—यद्यपि कहूं सूर्य तो कहूं अणुरूप हूं ॥
 कहूं समुद्र तो कहूं बिंदुरूप हूं । तथापि प्रपंच-
 दृष्टिसे मेरेकूं मेरा मिलना दुर्लभ भया है ॥ ३ ॥

तलस्मे इसरारे गन्जे मखफि

कहूँ न सीनेकूं अपने क्युँ कर ।

अयाँ हुवा हाले हर्दो आलम्

हुवा जो जाँहिर कमाल मेरा ॥ ४ ॥

अर्थः—गुप्तरत्नखाणिका यह एक चमत्कार

है । तो मैं अपने अंतःकरणकूं किस वासते न
कहूं ? जबसे मेरा ऐश्वर्य प्रकट भया है तबसे
दोनूलोक (इसलोक और परलोक)का मर्म
स्पष्ट हो गया है ॥ ४ ॥

हिजावे खुशेद जातेमोनि

हुवा जेहरे नमूदे सूरत् ।

मिटा जो दुनियासे नाम आदम्

हुवा है मुजकु विसाल मेरा ॥ ५ ॥

अर्थः—नामरूपके प्रकट होनेसे लक्ष्यस्वरूप
सूर्यकूं आवरण भया । परंतु जबसे जगतमेसे
आदम नामका नाश भया तबसे मेरेकूं मेरी
प्राप्ती भई है ॥ ५ ॥

हमेशा आंखेंकु बंध रखना

जमाल मानिका देखना है ।

जो गोशेकर हूं वो है समाअत्

जो बेजबानि है काल मेरा ॥ ६ ॥

अर्थः—निरंतर बहिरमुखदृष्टीरूप नेत्रनकुं टां-
पना लक्ष्यस्वरूपका देखना है । जो एकांतमें
बैठे हैं सो श्रवण करते हैं । तैसें मैं जिह्वारहित-
काही यह कथन है ॥ ६ ॥

“अलस्तो कालूवला” कि रम्जें
न पूछ मुजसे वतन तु हर्गिज् ।

हुं आप मशगूल आप शागिल्
जयाव खुद है सवाल मेरा ॥ ७ ॥

अर्थः—वतन साहेब कहते हैंः—“मैं तुमारा
ईश्वर हूं वां नहीं ? अवश्य हो” इस विनोदकूं
हे मुमुक्षु ! तूं मुजसे कदाचित् वारंवार मति
पूछ ॥ सुन कहता हूंः—मैही बंध भया हूं औ
मैही बंधका कर्ता हूं औ उक्तप्रश्न मेरा है तथा
उत्तर बी मेराही है ॥ ७ ॥

१ ऐसा प्रसंग है कि “सृष्टिके आदिवालयमें परमेश्वरने
सर्वजीवनकूं पूछा जो ‘मैं तुमारा ईश्वर हूं वां नहीं’
तब कितनेक जीवोंने उत्तर दिया जो ‘अवश्य हो’ ॥

("तफरका होता है ऐसा भी" इत्यादिक राह)
 मैं न बन्दा न खुदा था मुजें मालूम न था ।
 दोनु इहत्से जुदा था मुजें मालूम न था ॥१॥

अर्थः—मैं जीव नहीं था औ ईश्वर वी नहीं
 था परंतु दोनुंजपाधिसैं न्यारा था । इतना मे-
 रेकूं ज्ञात नहीं था ॥ १ ॥

शिके हैरत हुइ आइनये दिलसे पैदा ।

मानिये शाने सफा था मुजें मालूम न था ॥२॥

अर्थः—अंतःकरणरूप दर्पणसैं एक आश्चर्य-
 रूप मूर्ति प्रकट हुई । तिसका अर्थरूप विव
 निर्मल था । परंतु मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ २ ॥

देखता था मैं जिसे होके नदीदा हर्सू ।

मेरी आँखोंमें लुपा था मुजें मालूम न था ॥३॥

अर्थः—जिसकूं मैं चक्षुरहित होईके सर्वदि-
 शाओंमें देखता था । वो मेरी चक्षुनमें गुप्त था ।
 यह वृत्तांत मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ३ ॥

आपही आप हो यौ तालिबो मतलूब है कौन ।
 मैं जो आशकूँ कहा था मुजें मालूम न था ॥४॥

अर्थ:—अपना आप होनेतैं इहां मुमुक्षु औ मोक्ष क्या है? अज्ञानदशामैं ऐसे कहता था कि “मैं आ-शकू हूं” परंतु उक्तअनुभव मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ४

दिल्के आईनेकूं मैं रूबरू रख कर देखा ।
आपका रूये सफा था मुजें मालूम न था ॥ ५ ॥

अर्थ:—अंतःकरणरूप दर्पणकूं मैंने सन्मुख राखिके देखा तो यद्यपि मेरा मुख निर्मल था तथापि सो मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ५ ॥

वजे मालूम हुई तुजसे न मिलनेकि सनम् ।
मैं हि खुद पर्दे हुवा था मुजें मालूम न था ॥ ६ ॥

अर्थ:—हे प्रिय ! तेरेसैं योग करनेकी युक्ति मेरेकूं ज्ञात न हुई । कोहेतैं जो मैंही आप आवरण भया था । यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था ॥ ६ ॥

बोदि मुइत् जो हुवा वस्ल खुला राजें वतन् ।
वासिले हकमें सदा था मुजें मालूम न था ॥ ७ ॥

अर्थ:—दीर्घकालके पीछे जबब्रह्मात्माकी प्राप्ति भई तब मर्म खुल गया जो मैं वतन सत्यस्वरूपमें सर्वदा एकरस पूर्वसैंही था । परंतु यह मेरेकूं ज्ञात नहीं था ७

शरीफ सालिमहंमद (काठियावाड) बेरावल.

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे प्रथम दगारे बहासे मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्थुपेएबलका डाकनमीशन पड़ेगा ॥ यह सर्वप्रथम सारे हिंदुस्थानमें जहा जहा पुस्तक बेचनेवाले है उनोंसे भी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावली तथा चंडी अक्षरादि अनुक्रमणिका-

सहित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमकागजकी ३

श्रीसटीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूटे औ कागजका.... .. १॥

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०॥

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(थोड़ीही प्रथम रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०॥

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलगान.... .. ०॥

श्रीईशाचष्टोपनिषद् । मूल औ श्रीशकरभाष्य

अनुसार हिंदुस्थानीमें ४

श्रीवालबोध टीकासहित. ०॥२

„ उक्तग्रंथ चित्रित कपडेके पूठेसहित ... १

श्रीपदार्थमंजूषा (वेदातपदार्थकोश ॥ आगेरु०४थे) ३

श्रीवेदस्तुति । अन्वययुक्त । तथा गुर्जरभाषा ०१

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

इस नामसे अनेक लघुग्रंथ प्रकट किये जाते हैं ॥ तिनमें
ऐसे चिह्नवाले ग्रंथ छपे हैं ॥ प्रत्येक अककी कीमत ०) ॥
रखी है । औ कोडकी ६ अकका मात्र रु ०॥ पडेगा ॥

*१ वेदातपदावलि (श्रीवि- *७ वेदातस्तोत्रसंग्रह अर्थ-
चारचंद्रोदयका सार) सहित. अरु ३-४-५ ६

*२ वेदातपदार्थसंज्ञा. < श्रीदीवाने बतन.

३ सूफीओंके गजल. ९ श्रीशकराचार्यकृत अ-

४ देवाजी भक्तके पद. परोक्षानुभूति आदिक.

५ अखाभक्तके पद. १० श्रीयोगवासिष्ठमैसे द-

६ प्रस्ताविकश्लोक अर्थसहित. शत दार्थात मूलसहित.

इनसे आदिलेके अनेक लघुग्रंथ उपरि लिखे नामसे
नही परंतु समयमंजोग अनुसार प्रकट किये जावेंगे ॥

ॐ

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

॥ श्रीमहावाक्यविवेक ॥

तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या सहित
ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजीकृत
सर्वमुमुक्षुके हितार्थ

शरीफ सालिमहंमदने

छपाई प्रकट किया ॥

श्रीमुंबईमें निर्णयसागरप्रेसमें छपा ॥

॥ सवत् १९४६-सन् १८८९ ॥

(प्रकटकर्ताने सर्वहक स्वाधीन रहे हैं)

॥ प्रस्तावना ॥

मंगल ॥ दोहा ॥

श्रीगुरुके पद बंदिके यह वेदांतविनोद ॥

प्रकट करों इस करि सर्वे सज्जन पावहु मोद १.

इन लघुग्रंथनसँ वेदांतनिष्ठ महापुरुषोंकू विनोद होवै औ मुमुक्षुनकू आत्मज्ञानका अभ्यास होईके परमपदकी प्राप्ति होवै । ऐसै दो हेतुकू चित्तविषे राखिके प्रकट किये जाते है ॥

श्रीपंचदशी जैसा वेदांतविषे उत्कृष्ट मननसहायक प्रक्रियाकी दृढतामें उपयोगी अन्यग्रंथ नहीं है ॥ पूर्व सन् १८७६ में (१४ वर्षसँ पूर्व) यह ग्रंथ दो विभागमें ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतंबरजी महाराजकृत तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्यासहित मैने छपाया था ॥ इसमें श्रीमहावाक्यविवेक नामक पंचम लघुप्रकरण है । सो इस अंकमें प्रकट किया है ॥ अंतमें श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक अर्थसहित रखे हैं ॥

इसीअंककी हठीपर पूर्णपंचदशी छपावनेका मैने संकल्प किया है । सो हरिइच्छाकरि कालपाइके सिद्ध होविगा ॥

शरीफ सालेमहंमद.

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीवेदांतविनोद ॥

सप्तम अंक ॥ ७ ॥

श्री पंचदशीगत

श्रीमहावाक्यविवेकनाम

पंचमप्रकरणप्रारंभः ॥ ९ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मंगलाचरण ॥

श्रीमत्सर्वगुरुन् नत्वा पंचदश्या तृभाषया ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥१॥

अर्थः—श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमनकरिके नर-
भाषासैं पंचदशीके महावाक्यविवेक नाम पंचम-

१ च्यारिमहावाक्यनका हे विवेक (विभाग) जित्-
थिषै सो ॥

२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत
प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) में
करुं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥
नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः—श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन
दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्यविवेककी
व्याख्या में संक्षेपतै करुं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनि-
पद्गत “ प्रज्ञानं ब्रह्म ” इस महा-
वाक्यका अर्थ ॥२८७-२८८॥

॥१॥ “ प्रज्ञान ” पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है । तिसकी सिद्धि-
अर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमें प्रगट) जो च्यारि-

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ १ ॥ ३

महावाक्य हैं तिनके अर्थकू क्रमते निरूपन करते हुये परमठपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविपै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत “ प्रज्ञानं ब्रह्म ” (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविपै “ प्रज्ञान ” शब्द (पद) के अर्थकू कहै हैं:—

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।
स्वादस्वादू विजानाति तत् प्रज्ञानमुदीरितम् १

[“ येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वादस्वादू विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम् ”] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक) कू देखता है औ शब्दकू सुनता है औ गंधकू सूंघता है औ शब्दकू बोलता है औ स्वादूअस्वादू (रस) कू जानता है सो (वृत्तिरूपलक्षित चैतन्य) “ प्रज्ञान ” कहा है ॥ १ ॥

२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत
प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका (नाम व्याख्या) में
कहं हूं ॥ १ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरण॥
नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः १

अर्थः—श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन
दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्यविवेककी
व्याख्या में संक्षेपतैं कहं हूं ॥ १ ॥

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनि-
पद्गत “ प्रज्ञानं ब्रह्म ” इस महा-
वाक्यका अर्थ ॥२८७—२८८॥

॥१॥ “ प्रज्ञान ” पदका अर्थ ॥२८७॥

॥२८७॥ मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धि-
अर्थ प्रसिद्ध (च्यारिवेदनमें प्रगट) जो च्यारि-

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ३

महावाक्य हैं तिनके अर्थकू क्रमते निरूपन करते हुये परमकृपालुआचार्य्य (श्रीविद्यारण्यस्वामी) आदिविषै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत “प्रज्ञानं ब्रह्म” (प्रज्ञान ब्रह्म है) इस महावाक्यविषै “प्रज्ञान” शब्द (पद) के अर्थकू कहै हैं:—

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।
स्वाद्वस्वाद् विजानाति तत् प्रज्ञानमुदीरितम् १
[“ येन इदम् ईक्षते शृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वाद्वस्वाद् विजानाति तत् प्रज्ञानम् उदीरितम् ”] जिस (चैतन्य) करि पुरुष इस (रूपादिक) कू देखता है औ शब्दकू सुनता है औ गंधकू सूंघता है औ शब्दकू बोलता है औ स्वाद्वस्वाद् (रस) कू जानता है सो (वृत्तिरूपलक्षित चैतन्य) “ प्रज्ञान ” कहा है ॥ १ ॥

४ पंचदशी—माहावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत .

टीका:—जिस चक्षुद्वारा निर्गत (निकसी) अंतःकरणकी वृत्तिउपहित (साक्षी) चैतन्यकरि इस देखनैयोग्य रूपआदिककूं पुरुष (संघात-रूप पुरुष) देखता है । तैसें श्रोत्रद्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)-करि पुरुष शब्दके समूहकूं सुनता है । तैसेंही घ्राण (नासिका)द्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्ति-रूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि पुरुष गंधके समूहकूं सूंघता है । औ जिस वाक्इंद्रिय अवच्छिन्न (उपहित)चैतन्यकरि पुरुष शब्दके समूहकूं बोलता है । औ रसनइंद्रियद्वारा निर्गत अंतःकरणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस (चैतन्य)करि स्वादुअस्वादु दोनूंभांतिके रसकूं पुरुष जानता है ॥ इहां (मूलश्लोकविषै) जो “ च ” शब्द है । सो अनुक्त (नहीं कहे अन्य-इंद्रियन)के समुदाय (ग्रहण)अर्थ है ॥ तैसें

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ ९

हुये कही औ नहीं कही सकल इंद्रिय औ अंतः-
करणकी वृत्तिनकरि उपलक्षित जो (कूटस्थ)
चैतन्य है । सोइ इहां (“ प्रज्ञानं ब्रह्म ” इस
महावाक्यविषै) “ प्रज्ञान ” ऐसैं कहिये है ॥ यह
अर्थ है ॥ इस कहनैकरि । जिसकरि “ प्रसिद्धि दे-
खता है ” इस आदिवाला औ “ सर्वहीं यह प्र-
ज्ञानके नामधेय (नाम) हैं ” इस अंतवाला जो
अवांतर (आत्माके स्वरूपके बोधक) वाक्यका
समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया ॥१॥

॥२॥ “ ब्रह्म ” पदका अर्थ औ (एक-
तारूप) वाक्यार्थ ॥ २८८ ॥

॥२८८॥ ऐसैं “ प्रज्ञान ” शब्दके अर्थकूं
कहिके “ ब्रह्म ” शब्दके अर्थकूं कहै हैं:-

चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु ।

चैतन्यमेकं ब्रह्मातः प्रज्ञानं ब्रह्म मय्यपि ॥२॥

६ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ १ ॥ [विदांत

[“चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्याश्वगवादिषु एकं चैतन्यं ब्रह्म”] चतुर्मुख (ब्रह्मा) इंद्र देवनविषै औ मनुष्य अश्व गौआदिकनविषै जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है ॥

टीका:—उत्तम जो देवादिक हैं औ मध्यम जो मनुष्य हैं औ अधम जो अश्वगौआदिक हैं तिन सर्वदेहधारिनविषै औ आकाशआदिकभूतनविषै जगत्के जन्मआदिक (स्थितिलय)का हेतुरूप जो एकचैतन्य है सो ब्रह्म है ॥ यह अर्थ है ॥ इस कहनैकरि “यह (ज्ञानरूप आत्मा) ब्रह्मा है । यह इंद्र है” इस आदिवाला । औ “प्रज्ञा (ज्ञानरूप चैतन्य) प्रतिष्ठा (सर्वका अधिष्ठान) है” इस अंतवाला । जो अर्वांतर (ब्रह्मके स्वरूपका बोधक) वाक्यका समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया ॥

ऐसै, “प्रज्ञान” औ “ब्रह्म” इन पदनके अर्थकूं

विनोद ७] पंचदशी-महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ ७

कहिके वाक्य (पदसमुदायरूप)के अर्थकूं कहै हैं:-

[“ अतः मयि अपि प्रज्ञानम् ब्रह्म ”]

यातैं मेरेविपै वी (स्थित) प्रज्ञान ब्रह्म है ॥२॥

टीका:- जातैं सर्व देव मनुष्य पशु आका-
शादिकविपै स्थित प्रज्ञान ब्रह्म है । यातैं मेरे-
विपै वी स्थित प्रज्ञान ब्रह्म है ॥ काहेतैं । प्रज्ञान-
पनैके अविशेष (समानपनै)तैं ॥ यह अर्थ है ॥२॥

❦

॥२॥ यजुर्वेदकी बृहदारण्यकउ-
पनिषद्गत “ अहं ब्रह्मास्मि ” इस
महावाक्यका अर्थ ॥ २८९-२९० ॥

॥१॥ “अहं” पदका अर्थ ॥ २८९ ॥

॥२८९॥ ऐतैं ऋग्वेदकी शाखाविपै स्थित
वाक्यके अर्थकूं निरूपण करिके अब यजुर्वेदकी
शाखाउंके मध्यमें जो बृहदारण्यकउपनिषद् है

८ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

तिसविपै गत “ अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूं) ”
इस महावाक्य (जीवब्रह्मकी एकताके बोधक
वाक्य)के अर्थके प्रकट करनेवास्ते “ अहं ”
शब्दके अर्थकूं कहै हैं:—

परिपूर्णः परात्मा ऽस्मिन्देहे विद्याऽधिकारिणि
बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन्नहमितीर्यते ३
[“ परिपूर्णः परात्मा विद्याधिकारिणि
अस्मिन् देहे बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फु-
रन् अहम् इति ईर्यते”] परिपूर्ण परमा-
त्मा । विद्या (ज्ञान)के अधिकारी इस दे-
हविपै बुद्धिका साक्षी होनेकरि स्थित होयके
जो स्फुरता है । सो “ अहं ” (मैं) इस
पदकरि कहिये है ॥ ३ ॥

टीका:— परिपूर्ण कहिये स्वभाव (स्वरूप)
तैं देशकालवस्तुकरि अपरिच्छिन्न जो परमात्मा
है । सो इस (मायाकरि कल्पितजगत्)विपै

१० पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

इहां “ ब्रह्म ” शब्दकरि वर्णन किया है ॥

टीका:— स्वतः परिपूर्ण । कहिये स्वभावतैं देशकालादिकरि अनवच्छिन्न (अपरिच्छिन्न) जो पूर्व (२८९वें श्लोकविषै) उक्त परमात्मा है । सो इहां (“ अहं ब्रह्मास्मि ” इस महावाक्य-विषै) “ ब्रह्म ” शब्दकरि वर्णन किया (लक्षणासैं कहा) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यगत “ अस्मि ” इस पदकरि दोनूं (“ अहं ” अरु “ ब्रह्म ” । इन) पदनके सां-

२ भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) पदनकी समानविभक्तिके बलसैं एकही अर्थविषै जो प्रवृत्ति । सो सामानाधिकरण्य कहिये है ॥ इहां (इस वाक्यविषै) “ अहं ” औ “ ब्रह्म ” ये दोपद क्रमतैं आत्मा औ ब्रह्मरूप अर्थके बोधक हैं । यातैं भिन्नअर्थयुक्त (अपर्याय) हैं । परंतु समान (प्रथमा) विभक्तिके बलसैं तिन दोपदनकी अखडएकरसतारूप एकहीं अर्थविषै प्रवृत्ति (लक्षणासैं वर्तना) है । सो सामानाधिकरण्य है । तिसहीसैं ब्रह्मात्माकी एकता सिद्ध है ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥९॥ ११

मानाधिकरण्यसे लभ्य (प्राप्य) जो जीव ब्रह्मकी एकता है । सो स्मरण करिये है । ऐसै कहै हैं:—

[“अस्मि इति ऐक्यपरामर्शः”] “अस्मि”

यह पद एकताका परामर्शक (स्मरण करावनेहारा) है ॥

फलित (वाक्यार्थ) कूं कहै हैं:—

[“ तेन अहम् ब्रह्म भवामि ”] तिस (हेतु) करि “ मैं ब्रह्मही हूं ॥ ४ ॥

॥३॥ सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्-गत “ तत्त्वमसि ” इस महावाक्य-का अर्थ ॥ २९१-२९२ ॥

॥ १ ॥ “ तत् ” पदका अर्थ ॥२९१॥

॥२९१॥ अब सामवेदकी छांदोग्यउपनि-

तिसका “ अस्मि ” पद स्मरण करावनेहारा है । अन्य अर्थका बोधक “ अस्मि ” पद नहीं है ॥

१२ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत

पदगत “तत्त्वमसि” (सो तूं है) इस महावाक्यके अर्थके प्रकाश करनेवास्ते “तत्” (सो)पदके लक्ष्य (लक्षणावृत्तिके विषय) अर्थकूं कहै हैं:—
एकमेवाद्वितीयं सन् नामरूपविवर्जितम् ।

सृष्टेः पुराऽधुनाऽप्यस्य तादृक्त्वं तद्वितीयते ५

[“सृष्टेः पुरा एकम् एव अद्वितीयम् नामरूपविवर्जितम् सत् । अस्य अधुना अपि तादृक्त्वम् तत् इति ईर्यते”] सृष्टिते पूर्व एकहीं अद्वितीय नामरूपरहित जो सत् था । इस (सत्)का अब (सृष्टिके पीछे) वी तैसैपना । “तत्” (सो) ऐसैं कहिये है ॥ ५ ॥

टीका:— “हे सोम्य यह (जगत्) आगे एकहीं अद्वितीयरूप सत्हीं था” । इस श्रुति-

३ “तत्त्वमसि” यह सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्के षष्ठप्रपाठक (अध्याय) गत महावाक्य है । सो नववार उपदेश किया है ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ १३

वाक्यकरि सृष्टिते पूर्व स्वगतादिभेदशून्य औ नामरूपरहित जो सत्त्वस्तु प्रतिपादन किया है । इस (सत्त्वस्तु)का अब (सृष्टिते उत्तरकालविषे) की विचारदृष्टिसँ जो तैसैपना (स्वगतादिभेदरहित नामरूपवर्जित सत्पना) है । सो “तत्” इस पदकरि कहिये (लक्षणासँ जानिये) है ॥ यह अर्थ है ॥ ५ ॥

॥२॥ “त्वं” पदका अर्थ औ “असि” पदके अर्थकरि (एकात्तारूप) वाक्यार्थ ॥ २९२ ॥

॥२९२॥ “त्वं” पदके लक्ष्यअर्थकूँ कहै हैं—
श्रोतुर्देहद्रियातीतं वस्त्वत्र त्वंपदेरितम् ।
एकता ग्राहतेऽसीति तदैक्यमनुभूयताम् ॥६॥
[“ श्रोतुः देहद्रियातीतं वस्तु अत्र त्वंपदेरितम् ”] श्रोताके देहद्रियतँ अतीत जो

१४ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ [वेदांत

वस्तु (सत् रूप आत्मा) है । सो इहां “त्वं”
पदकरि कहिये है ॥

टीका:— श्रवणादिकके अनुष्ठानसै महावा-
क्यके अर्थकी प्रतिपत्ति (निश्चय) करनैहारा
जो श्रोता है । तिसके देहइन्द्रियतै अतीत
कहिये देह औ इन्द्रियतै उपलक्षित स्थूलसूक्ष्म-
आदि (कारण)रूप तीनशरीर हैं । तिनका
साक्षी होनैकरि तिनतै विलक्षण सद्बस्तु है । सो
महावाक्यगत “त्वं” इस पदकरि लक्षित
(लक्षणासै जान्या) है ॥ यह अर्थ है ॥

इस वाक्यमें स्थित “असि” (है) इस प-
दकरि “ तत् ” औ “ त्व ” इन पदनके सामा-
नाधिकरण्यसै लब्ध (प्राप्त) जो दोनंपदनके
अर्थ (ब्रह्म औ आत्मा)की एकता (सिद्ध) है । सो
शिष्यके ताई प्रतीति कराइये है । ऐसै कहे हैं:—

[“ ‘असि’ इति एकता ग्राह्यते ”]

विनोद ७] पंचदशी-महानाक्यविवेक ॥ ९ ॥ १९

“असि (है)” इस पदकरि एकता ग्रहण कराइये है ॥

इस निरूपणकरि सिद्ध भया जो अर्थ (वाक्यार्थ) ताकूं कहै हैं:-

[“ तदैक्यं अनुभूयताम्”] यातें तिनकी एकता अनुभव करना ॥ ६ ॥

टीका:- यातै तिन “तत्” औ “त्वं” पदके अर्थ (ब्रह्म आत्मा)की प्रमाणसिद्ध एकता मुमुक्षुजनोंकरि अनुभव (साक्षात्) करनी चाहिये ॥ यह अर्थ है ॥ ६ ॥

॥४॥ अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनि-

पद्गत “अयमात्मा ब्रह्म” इस महावाक्यका अर्थ ॥२९३-२९४॥

॥१॥ “अयं” औ “आत्मा” पदका अर्थ ॥२९३॥

१६ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ [वेदांत

॥२९३॥ अब क्रमतेँ प्राप्त अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत “अयमात्मा ब्रह्म” (यह आत्मा ब्रह्म है) । इस महावाक्यके अर्थकूं व्याख्या करनेकूं इच्छते हुये आचार्य । आदिविपै “अयं” (यह) औ “आत्मा” (आप) इन दो-पदनकरि विवक्षितअर्थकूं क्रमकरि दिखावै हैं:-
स्वप्रकाशापरोक्षत्वमयमित्युक्तितो मतम् ।
अहंकाराऽऽदिदेहांतात् प्रसगात्मेति गीयते ७
[“‘अयम्’ इति उक्तितः स्वप्रकाशा-परोक्षत्वं मतम्”] “अयं” इस उक्ति (पद)

४ यह अथर्वणवेदकी मांडूक्यउपनिषद्गत महावाक्य है ॥ जातेँ “सर्व यह (उक्त ॐकारमात्र जगत्) ब्रह्म है” यातेँ “अयं आत्मा ब्रह्म (यह आत्मा ब्रह्म है) सो यह आत्मा च्यारीषादवाला है” [२] ॥ इहां जाननेकी सुगमताअर्थ धान्यके परिमाणमें उपयोगी कर्पापणप्रस्थादिककी न्याईं पादकल्पना है । गौकी न्याईं नहीं ॥ इति ॥

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ५ ॥ १७

करि आत्माका स्वप्रकाशपनैकरि युक्त अपरोक्षपना मान्याहै ॥

टीका:—“अयं” इस उक्ति (शब्द) करि साक्षीका स्वप्रकाशताकरि (युक्त) अपरोक्षपना अभिमत (मान्या) है ॥ अदृष्ट (धर्मअधर्म) आदिकनकी न्याई नित्यपरोक्षपना औ घटादिकनकी न्याई दृश्यपना (परप्रकाशतायुक्त अपरोक्षपना) इन दोनूं (अनात्मधर्मन) कूं आत्मार्ते निवारण करनै कूं मूलविषै “स्वप्रकाश” औ “अपरोक्षपना” ये दोविशेषण हैं । ऐसैं जानना ॥

देहआदिकविषै बी आत्मशब्दके प्रयोग (योजना)के देखनैतैं । इस महावाक्यविषै “आत्म” शब्दकरि क्या कहनै कूं इच्छित है ? इस आकांक्षा (पूछनैकी इच्छा)के हुये कहै हैं:—

[“अहंकारादि देहांतात् मत्सकआत्मा इति गीयते”] अहंकारसैं आदिलेके दे-

१८ पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ६ ॥ [वेदांत

हपर्यंत जो (संघात) है। तिसरें जो प्रत्यक्
(आंतर) है। सो “आत्मा” ऐसैं क-
हिये है ॥ ७ ॥

टीका:—अहंकार है आदि जिस (प्राण मन
इंद्रिय देहरूप संघात)के। सो (संघात) अहंका-
रादि है ॥ तैसैं देह है अंत जिस (कथन किये सं-
घात)के। सो (संघात) देहांत (देहपर्यंत) कहिये
है ॥ तिस (अहंकारसैं आदिलेके देहपर्यंत संघात)
तैं जो प्रत्यक् है। कहिये तिस (संघात)का अ-
धिष्ठान होनैकरि औ साक्षी होनैकरि आंतर जो
(चेतन) है। सो इस महावाक्यविषै “आत्मा”
ऐसैं गाइये (कहिये) है ॥ यह अर्थ है ॥ ७ ॥

॥२॥ “ब्रह्म” पदका अर्थ औ एकता-
रूप वाक्यार्थ ॥२९४॥

॥२९४॥ ब्राह्मण आदिकविषै बी “ब्रह्म”

विनोद ७] पंचदशी—महावाक्यविवेक ॥ ९ ॥ १९

शब्दके प्रयोग (योजना)के देखनेके । तिन
(ब्रह्मणादिकन)के व्यावर्तन (भेद जनावने)
वास्ते इस महावाक्यविषै “ ब्रह्म ” शब्दके
विषयित्तार्थकू कहै हैं:—

दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतस्तत्त्वमीर्यते ।

ब्रह्मशब्देन तद् ब्रह्म स्वप्रकाशात्मरूपकम् ८

[“ दृश्यमानस्य सर्वस्य जगतः तत्त्वम्
‘ब्रह्म’-शब्देन ईर्यते ”] दृश्यमानसर्वजग-
त्का जो तत्त्व (वास्तवस्वरूप) है । सो
“ ब्रह्म ” शब्दकरि कहिये है ॥

टीका:— दृश्य होनेकरि मिथ्यारूप जो सर्व
(आकाशादिकजगत्) है । तिसका तत्त्व । क-
हिये अधिष्ठान होनेकरि औ तिस (उक्तजगत्)के
बाधका अवधि (सीमा) होनेकरि पारमार्थिक
(वास्तविक) सच्चिदानन्दलक्षणयुक्त जो स्वरूप

२० पंचदशी-महावाक्यविवेक ॥ १ ॥ [वेदांत

है । सो इस महावाक्यविषै “ ब्रह्म ” शब्दकरि कहिये है ॥ यह अर्थ है ॥

वाक्य (पदसमुदाय)के अर्थकूं कहै हैं:-

[“ तद् ब्रह्म स्वप्रकाशात्मरूपकम् ”]

सो ब्रह्म स्वप्रकाश आत्मस्वरूप है ॥ ८ ॥

टीका:- जो उक्तलक्षणवाला ब्रह्म है । सोइहीं स्वप्रकाशात्म (अपना)स्वरूप है ॥ यह ब्रह्म-आत्माकी एकरूप वाक्यका अर्थ है ॥ (इस-रीतिसे कक्षा जो च्यारिमहावाक्यनका अर्थ ब्रह्म (आत्माकी एकता) ताकूं जिस जिस प्रक्रिया-विषै रुचि होवै तिस तिस प्रक्रियाकी रीतिसे विवेकवैराग्यआदिक च्यारीसाधनसंयुक्त इये मुमुक्षुजनोंनै वेदांतशास्त्र औ ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुखद्वारा वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थके विचारकरि पदार्थ-शोधनपूर्वक यथार्थ जानिके ध्वणमननादिद्वारा संशयविपर्ययकूं निवारण करि दृढअपरोक्षनिष्ठासे

विनोद ७] पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक २१

अज्ञान औ ताके कार्यरूप अनर्थकी निवृत्ति औ
परमानंदकी प्राप्तिरूप जीवन्मुक्ति औ विदेहमु-
क्तिका अनुभव करना योग्य है ॥ इति ॥ ८ ॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य

वापुसरस्वतीपूज्यपादशिष्य पीतां-

वराहविदुषा विरचिता पंचद-

श्या महावाक्यविवेकस्य तत्त्व-

प्रकाशिकाख्या व्याख्या

समाप्ता ॥ ५ ॥

॥ श्रीपंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक ॥

मायाविद्यं विहायैवमुपाधी परजीवयोः ।

अखंडं सच्चिदानंदं परं ब्रह्मैव लक्ष्यते ॥४८॥

अर्थ.—ऐसे २पर औ जीवकी उपाधि
माया औ अविद्याकूं छोडके १अखंड सच्चि-
दानंद परब्रह्मही लखिये है (प्र. वि. ॥४८॥)

१२ पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक [वेदांत

चोद्यं वा परिहारो वा क्रियतां द्वैतभाषया ।
अद्वैतभाषया चोद्यं नास्ति नापि तैदुत्तरम् ३९

अर्थ.—१ चोद्य (प्रश्न) वा परिहार (उत्तर)
२ द्वैतकी भाषाकरि ३ करिये है औ ४ अद्वैतकी
भाषा करि चोद्य नहीं है औ ५ तिस (प्रश्न)
का उत्तर ६ वी ७ नहीं है (पं. वि. ॥ १०४ ॥)
वाढं निद्रादयः सर्वेऽनुभूयंते न चेतारः ।

तथाऽप्येतेऽनुभूयंते येन तं को निवारयेत् १२

अर्थ:—१ “निद्रा (आनंदमय) आदिक सर्व
(कोश) अनुभूत (अनुभवके विषय) होवै हैं
२ औ तिनतैं भिन्न आत्मा अनुभूत ३ नहीं होवै
है” । यह (तेरा कथन) ४ सत्य है । ५ तथापि
६ जिस (अनुभव) करि ७ यह (पंचकोश)
अनुभव करिये हैं ८ तिस (अनुभव) कूं कौन
(पुरुष) निवारण (निषेध) करैगा ? कोइवी
करी शके नहीं (पं. वि. ॥ १८६ ॥)

जलपापाणमृत्काष्ठवास्याकुडालकादयः ।

ईश्वराः सर्वैवेते पूजिताः फलदायिनः २०८

अर्थः—१जल । २पापाण । ३मृत्तिका । ४काष्ठ ।

वास्या (काष्ठके छीलनैका साधन) । कुडालक आदिक हैं । २यह ३सर्वहीं ४ईश्वर हैं औ ५पूजन किये हुये ६फलदायक हैं (चि. दी ॥ १०२ ॥)

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न वद्धो न च साधकः ।

न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥२३५॥

अर्थः—न निरोध है । न उत्पत्ति है । न वद्ध है । न साधक है । न मुमुक्षु है । औ न मुक्त है । ऐसैं यह परमार्थता (वास्तवता) है (चि. दी. ॥ १२९ ॥)

अप्रवेश्य चिदात्मानं पृथक् पश्यन्नहंकृतिम् ।

ईच्छंस्तु कौटिल्यस्तूनि नेर्वाधो ग्रंथिभेदतः २६२

अर्थः—अहंकारविषे १चिदात्माकूं २अप्रवेश

२४ पंचदशिके प्रस्ताविक श्लोक [विदांत

करिकै । ३अहंकारकूं चिदात्मानै ४भिन्न देख-
ताहुआ ५कोटिवस्तुनकूं ६इच्छै तौबी ७अं-
थिके भेदतै (साक्षी आत्माका वा बोधमोक्षका)
८बाध ९नहीं है (चि. दी. ॥ ९९६ ॥)

अप्रवृत्तकर्मनानात्वाद् बुद्धानामन्यथाऽन्यथा
वर्तनं तेन शौस्वार्थे भ्रमितव्यं न पंडितैः ॥२८७

अर्थः— १प्रारब्धकर्मके नाना होनैकरि । बुद्ध
(ज्ञानिन)का अन्यथा अन्यथा (और और
प्रकारसै) वर्तना है । तिस (विवक्षणवर्तनै)
करि २पंडितजनोनै ३शास्त्रके अर्थविषे ४भ्र-
मणा (भ्रांत होना) योग्य नहीं है (चि.
दी. ॥ ९८१ ॥)

आत्मानं चेद् विजानीयादयमस्मीति पुरुषः ।
किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत् १॥

अर्थः— १पुरुष (जीव) २आत्माकूं ३“यह
मैं हूं” इसप्रकार ४जब जानै तब ५किस (भो-

विनोद ७] पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक २९

ग्यविषय)कूं इच्छता हुआ किस (भोक्ता)के काम (भोग)अर्थ शरीरके पीछे ज्वर (संताप)कूं पावै ? (तृ. दी. ॥ १८५ ॥)

देहोऽऽत्मज्ञानवत् ज्ञानं देहोऽऽत्मज्ञानबाधकां
आत्मन्येव धेवेद् यस्य स नैच्छन्नपि मुच्यते २०

अर्थ:—१ देहरूप आत्माके ज्ञानकी न्याई २
आत्माविषैही ३ देहात्मज्ञानका बाधक ४ ज्ञान
५ जिसकूं ६ होवै । ७ सो नही इच्छता हुआ
बी मुक्त होवै है (तृ. दी ॥ ६०४ ॥)

जनकादेः कथं राज्यमिति चेद् दृढबोधतः ।
तथा तेषाऽपि चेत् तर्कं पठ यद्वा कृपिं कुरु १३०

अर्थ:—१ “जनकादिककूं राज्य कैसे भया?”
ऐसे जो कहै । तो दृढबोधतै (जनकादिककूं
राज्य भया) । २ तैरेकूं बी जो ३ तैसै (दृढबोध)
होवै ती ४ तर्ककूं पठन कर यद्वा कृपि (लेती)कूं
कर (तृ. दी. ॥ ७१४ ॥)

२६ पंचदशीके प्रस्ताविक श्लोक [वेदांत

अवश्यं भावि भावानां प्रतीकारो भवेद् यदि ।
तदा दुःखैर्न लिप्येरन् नैलरामयुधिष्ठिराः १५

अर्थः—१ अवश्य होनेहारे जो भाव (दुःखा-
दिक) हैं । तिनका प्रतीकार (निवृत्तिका उ-
पाय) २जब ३होवै । ४तब ५नल राम औ
युधिष्ठिर ६दुःखनकरि ७लित होते ८नहीं (सो
बी दुःखप्रस्त भये । यार्तै सो अनिवार्य है)
(तृ. दी. ॥ ७४० ॥)

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिप्रपंचं यत् प्रकाशते ।
तद् ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबंधैः प्रमुच्यते २१३

अर्थः—१ “जो ब्रह्म । २जाग्रत्—स्वप्न—सु-
षुप्ति—आदिकप्रपंचकूं ३प्रकाशता है । सो ब्रह्म
मैं हूं” ऐसे जानिके सर्वबंधनर्तै मुक्त होवै है
(तृ. दी. ॥ ७९७ ॥)

दुःखिनोऽज्ञाः संसरंतु कामं पुत्राद्यपेक्षया ।
परमानंदपूर्णाऽहं संसरामि किमिच्छया ॥२५६

विनोद ७] पंचदशके प्रस्ताविक श्लोक २७

अर्थ:—१दुःखी जो अज्ञानी हैं । तो २जैसे
इच्छा होवे तैसे पुत्रादिकनकी अपेक्षासे ३इस-
लोकसंबंधी व्यवहारकूं करदू औ ४परमानंद-
करि पूर्ण जो मैं हूं सो ५किसकी इच्छा करि
६व्यवहारकूं करों ? (तृ. दी. ॥ ८३९ ॥)

नित्यानुभवरूपस्य को मे^२ चाऽनुभवः पृथक् ।
कृतं कृत्यं प्रापणीयं प्राप्तमित्येव निश्चयः १६६

अर्थ:—१नित्य (उत्पत्तिनाशरहित) अनु-
भवरूप २मेरेकूं ३कौन ४अनुभव भिन्न है ?
(कोई बी नहीं) ॥ जो ५करनैयोग्य था सो
६किया औ ७ प्राप्त होनैयोग्य था सो पाया ।
यहहीं मेरा निश्चय है (तृ. दी. ॥ ८९० ॥)

अनुभूतेरभावेपि ब्रह्मास्मीत्येव चिंतयताम् ।
अप्येसत्प्रोप्यते ध्यानान्नित्याप्तं ब्रह्म किं पुनः

अर्थ:—१अनुभूतिके अभाव हुये बी “ मैं
ब्रह्म हूं ” ऐसैही चिंतन करना । २असत् (अ-

२८ पंचदशके प्रस्ताविक श्लोक [वेदांत

विद्यमानं वस्तु) ३वी ध्यानर्त ९प्राप्त होवै है ।
तब ईफेर ७नित्यप्राप्त जो ब्रह्म सो ध्यानर्त प्राप्त
होवै यामैं क्या (कहना) है (ध्या.दी.॥११३॥)
भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यते सर्वसंशयाः ।

१क्षीयंते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥७

अर्थ:—१तिस २परावर (परमात्मा)के ३दृष्ट
(देखे) हुये ४इस (पुरुष)का ५हृदयग्रंथि ६
भेदनकं पावता है औ ७सर्वसंशय ८छेदन होवै
हैं ९औ १० कर्म ११ क्षीण (नाश) होवै है
(ब्र. यो. ॥ ११४९ ॥)

असाध्यः कस्यचिद् योगः कस्यचिज्ज्ञाननिश्चयः
इत्थं विचार्य मार्गो द्वौ जंगाद परमेश्वरः ॥८३

अर्थ:—१किसी (अधिकारी)कूं योग २अ-
साध्य (दुष्कर) है औ ३किसीकूं ज्ञानका नि-
श्चय असाध्य है । ऐसैं विचार करिके ४परमे-
श्वर (श्रीकृष्ण) । ५दोनुं (योग औ विवेकरूप)
६मार्गनकूं ७कहते भये (ब्र. भा. ॥१३९९॥)

शरीफ सालेमहंमद-बैराबल (काठियावाड).

दाउद शरीफ—श्रीभावनगर.

नीचे लिखे ग्रंथ हमारे वहांसे मिलेंगे औ डाक महसूल नहीं पड़ेगा मात्र वेल्सुपेणलका डाककमीशन पड़ेगा ॥ यह सर्वग्रंथ सारे हिंदुस्थानमें जहां जहां पुस्तक बेचनेवाले हैं उनोंसे भी मिल सकते हैं ॥

श्रीविचारसागर ५५४ टिप्पणसहित औ वृत्ति-

रत्नावली तथा घड़ी अकारादि अनुक्रमणिका-
सहित तृतीयावृत्ति ३।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमभागजकी ४।

श्रीसुंदरविलास । ज्ञानसमुद्र आदिक तृतीयावृ० २।

„ उक्ततृतीयावृत्ति उत्तमभागजकी ३

श्रीसत्रीकाअष्टावक्रगीता मूलकी भाषासहित. १

„ उक्तग्रंथ उत्तम पूठे औ कागजका.... .. १।।।

श्रीविचारचंद्रोदय । तृतीयावृत्ति ०।।।

श्रीपंचदशी । मूल औ टीकाकी भाषा । दो विभागमें

(गोरेहो ग्रंथ रहे हैं) १५

श्रीपंचदशीका प्रथम प्रकरण.... .. ०।।।

श्रीपंचदशीका प्रथम औ पंचम प्रकरण. ... १

श्रीपंचदशी मूलमात्र.... .. ०।।।